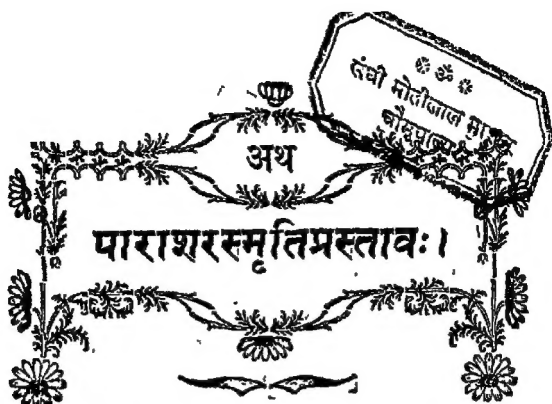




अष्टादश स्मृतियों में पाराशरस्मृति एक है, यह सब किसी को ज्ञात है । ब्रह्मप्रेस इटावा में अष्टादश स्मृतियों की एक जिल्द छप चुकी है, उस जिल्द में पाराशरस्मृति भी आ चुकी है । यह पाराशरस्मृति दो प्रकार की है एक बृहत् द्वितीय लघु, इन दो भेदों का कारण यही प्रतीत होता है कि जिस में धर्मशास्त्र के वक्तव्य विषय का विशद रूप से वर्णन किया गया उसका नाम बृहत् वा बृद्ध पाराशर हुआ और जिसमें वही धर्म विषय संक्षेप से वर्णित हुआ उसका नाम लघु पाराशरस्मृति रक्खा गया, सो कित्तर और संक्षेप भेद से ऐसा नाम भेद अन्य भी कई स्मृतियों में हुआ है, हमने यह लघु पाराशरस्मृति यहां पृथक् इस लिये छपाई है कि-

**सद्युगेमानवाधर्माः-स्त्रेतायांगीतमामताः ।**

**द्वापरेशंखलिखिताः कलौपाराशराःस्मृताः ॥१॥**

यह श्लोक पाराशरस्मृति का सर्वत्र प्रसिद्ध है कि मनुस्मृति में कहे धर्म विशेष कर सत्ययुग में गौतम स्मृति के धर्म त्रेता में, शंख लिखित स्मृति के धर्म द्वापर युग में और महर्षि पाराशर के कहे धर्म कलियुग में विशेष कर मान्य हैं । यद्यपि सब युगों में सब स्मृतियों के जानने पढ़ने और तदनुसार आचरण करके अपने सुधार की आवश्यकता मनुष्य मात्र को है तथापि अब वर्तमान कलियुग में जिन लोगों को विस्तृत धर्म शास्त्र पढ़ने देखने का अवकाश नहीं, उन को कम से कम विशेष कर कलियुग के लिये बने इस छोटे से धर्म शास्त्र को अवश्य देखना जानना चाहिये । अष्टादश स्मृतियों का मूल्य २॥ वा ३) सब लोग व्यय नहीं कर सकते परन्तु इस अल्प मूल्य वाले पुस्तक को सब कोई लेसकता- है । इत्यादि विचार से इस को पृथक् छपाया है । पाठकों को यह भी ध्यान रहे कि "पाराशरीय धर्म शास्त्र उत्तर खण्ड" इस नाम से एक तीसरी भी पाराशरस्मृति छपी है, उस में केवल वैष्णव सम्प्रदाय के पञ्च संस्कारों का वर्णन है, किसी सम्प्रदाय विशेष के आचरणों का आग्रह करना स्मृतियों का विषय नहीं है, इसी कारण मन्वादि अधिक स्मृतियों में साम्प्रदायिक

विचारों का नाम मात्र भी नहीं पाया जाता, इसी कारण सर्व साधारण वर्णाश्रम धर्म प्रेमी हिन्दु समुदाय के लिये पराशरीय धर्म शास्त्र उत्तर खण्ड की आवश्यकता हम नहीं समझते। प्रायः सभी स्मृतियों में धर्म शास्त्र का विषय एकसा है और सभी में कुछ २ विषय विशेष रूप से वर्णित हैं, इस पराशरस्मृति में कृषि तथा गोरक्षा का विशेष विचार है। मन्वादि स्मृतियों के मन्तव्यानुसार कृषि गोरक्षा कर्म वैश्य वर्ण के हैं, परन्तु आपत्काल में वैश्य कर्म द्वारा ब्राह्मण भी अपना निर्वाह करसकता है, ऐसा भी लेख धर्म शास्त्रों में विद्यमान है ॥

यह भी विदित है कि अब कलियुग है, और इस कलियुग में विशेष कर ब्राह्मणों के लिये आपत्काल है, क्योंकि ब्राह्मण वर्ण की अपने धर्मानुकूल वेद के अध्यायनादि पद कर्मों द्वारा जैसी जीविका प्राचीन काल में थी, इस वर्ण का जैसा आदर होता था वैसा आदर ब्राह्मण का अब नहीं रहा, पहिले राजाओं की ओर से ब्राह्मणों का आदर होता था, तब जीविका के बिना ब्राह्मण दुःखी नहीं होते थे। अब यदि कोई ब्राह्मण ठीक २ शास्त्रानुसार अपना कर्त्तव्य पालन करे तो भी जीविका द्वारा उसका निर्वाह नहीं चल सकता यद्यपि ब्राह्मण लोग भी अपने कर्त्तव्य से, भ्रष्ट शास्त्रों से अनभिज्ञ होगये हैं, तथापि समयानुसार अच्छे धर्म प्रेमी ब्राह्मणों का भी अब वैसा आदर नहीं होता जैसा होना चाहिये इसी लिये उन पाठनादि छोड़ के भारत के लाखों ब्राह्मण खेती करने लगे हैं। आपत्काल में खेती करता हुआ भी ब्राह्मण अपने सन्ध्या तर्पण पञ्चमहायज्ञादि धर्म का पालन कैसे कर सकता और कृषि कर्म के दोष से कैसे बच सकता है यह सब विचार महर्षि पराशर ने इस स्मृति में स्पष्ट दिखाया है। तदनुसार आचरण करने से कृषि करता हुआ भी ब्राह्मण धार्मिक रहसकता है।

## अथ पाराशरस्मृतिप्रारम्भः



अथातोहिमशैलाग्रे देवदारुवनालये ।  
 व्यासमेकाग्रमासीनमपृच्छन्नृषयःपुरा ॥ १ ॥  
 मानुपाणांहितंधर्मं वर्त्तमानेकलौयुगे ।  
 शौचाचारं यथावच्च वदसत्यवतीसुत ! ॥ २ ॥  
 तत्श्रुत्वा ऋषिवाक्यंतु सशिष्योऽग्न्यर्कसन्निभः ।  
 प्रत्युवाचमहातेजाः श्रुतिस्मृतिविशारदः ॥ ३ ॥  
 नचाहं सर्वतत्त्वज्ञः कथंधर्मंवदाम्यहम् ।  
 अस्मत्पितैव प्रष्टव्य इति व्यासः सुतोऽवदत् ॥ ४ ॥  
 ततस्ते ऋषयः सर्वे धर्मतत्त्वार्थकाङ्क्षिणः ।  
 ऋषिं व्यासं पुरस्कृत्य गतावदरिकाश्रमम् ॥ ५ ॥  
 नानापुष्पलताकीर्णं फलपुष्पैरलङ्कृतम् ।  
 नदीप्रस्रवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् ॥ ६ ॥

देवदारु वृक्षों के वन में हिमालय पर्वत के ऊपर एकाग्र चित्त से बैठे हुए व्यास जी से पूर्वकाल में ऋषियों ने पूछा ॥ १ ॥ हे सत्यवती के पुत्र व्यासजी ! वर्तमान कलियुग में मनुष्यों का हितकारी धर्म शौच और आचार हम से कहो ॥ २ ॥ उक्त ऋषियों के वाक्य को सुनकर शिष्यों सहित अग्नि और सूर्य के तुल्य बड़े तेज वाले श्रुति और स्मृति में चतुर व्यासजी ऋषियों के प्रति बोले ॥ ३ ॥ कि हम सब तत्त्वों को नहीं जानते [यह कथन पिता पराशर की प्रशंसाार्थ है] तब कैसे धर्म को कहें। हमारे पिता को ही यह विषय पूछो यह पराशर के पुत्र व्यास ने कहा ॥ ४ ॥ तिसके अनन्तर धर्म के तत्त्व को जानना चाहते हुए वे सब ऋषि लोग व्यास ऋषि को आगे लेकर वदरिकाश्रम ( बद्रीनारायण ) को गये ॥ ५ ॥ जो अनेक प्रकार के पुष्प लताओं से युक्त फल-फूलों से शोभायमान, नदियों तथा झरनों से युक्त, पवित्र तीर्थों से जिसकी शोभा

मृगपक्षिनिनादाढ्यं देवतायतनावृतम् ।  
 यक्षगन्धर्वसिद्धैश्च नृत्यगीतैरलङ्कृतम् ॥ ७ ॥  
 तस्मिन्नृषिसभामध्ये शक्तिपुत्रंपराशरम् ।  
 सुखासीनं महातेजा मुनिमुख्यगणवृतम् ॥ ८ ॥  
 कृताञ्जलिपुटोभूत्वा व्यासस्तु ऋषिभिः सह ।  
 प्रदक्षिणाभिवादैश्च स्तुतिभिः समपूजयत् ॥ ९ ॥  
 अथ सन्तुष्टहृदयः पराशरमहामुनिः ।  
 आहसुस्वागतं ब्रूहीत्यासीनो मुनिपुंगवः ॥ १० ॥  
 कुशलं सम्यगित्युक्त्वा व्यासः पृच्छत्यनन्तरम् ।  
 यदि जानासि मे भक्तिं स्नेहाद्वा भक्तवत्सल ! ॥ ११ ॥  
 धर्मकथय मे तात ! अनुग्राह्यो ह्यहं तव ।  
 श्रुता मे मानवाधर्मा वासिष्ठाः काश्यपास्तथा ॥ १२ ॥  
 गार्गीया गौतमीयाश्च तथा चौशनसाः स्मृताः ।  
 अत्रेर्विष्णोश्च संवर्ता दाक्षा आङ्गिरसास्तथा ॥ १३ ॥

है ॥ ६ ॥ मृग तथा पक्षियों के सुहावने शब्दों से युक्त, जिस में देवालय विद्यमान हैं, और जो यक्ष, गन्धर्व सिद्ध, तथा अप्सरादि के नृत्य और गीतों से शोभा युक्त है ॥ ७ ॥  
 ऐसे बदरिकाश्रम में ऋषियों की सभा के बीच सुखपूर्वक बैठे तथा बड़े २ नामी अनेक मुनीश्वर जिन के चारों ओर बैठे हैं ऐसे शक्ति के पुत्र पराशर का ॥ ८ ॥ ऋषियों सहित बड़े तेजस्वी व्यास जी ने हाथ जोड़ कर परिक्रमा अभिवादन और स्तुतियों से पूजन किया ॥ ९ ॥ इसके अनन्तर मन से संतुष्ट हुए मुनियों में उत्तम पराशर महा-मुनि व्यास जी से बोले कि तुम भली प्रकार अपना स्वागत ( आनन्द से आना ) कहो ॥ १० ॥ तब व्यास जी ने कुशल पूर्वक स्वागमन कह कर पीछे यह पूछा कि हे भक्तवत्सल ! जो आप मेरी भक्तिको जानते हो तिससे वा स्नेह से ॥ ११ ॥ हे पितः मुझसे धर्म कहिये क्योंकि मैं आपके अनुग्रह करने योग्य हूँ—मैंने मनु, वसिष्ठ, कश्यप, ॥ १२ ॥ गर्ग, गौतम, उशना, अत्रि, विष्णु, संवर्त, दक्ष, अंगिरा, ॥ १३ ॥

शातातपाश्चहारीता याज्ञवल्क्यकृताश्रये ।  
 आपस्तम्बकृताधर्माः शंखस्यलिखितस्यच ॥ १४ ॥  
 कात्यायनकृताश्रैव तथाप्राचेतसान्मुनेः ।  
 श्रुताह्येतेभवत्प्रोक्ताः श्रौतार्थामेनविस्मृतोः ॥ १५ ॥  
 अस्मिन्मन्वन्तरेधर्माः कृतत्रेतादिकेयुगे ।  
 सर्वधर्माःकृतेजाताः सर्वेनष्टाःकलौयुगे ॥ १६ ॥  
 चातुर्वर्ण्यसमाचारं किञ्चित्साधारणंवद ।  
 चतुर्णामपिवर्णां कर्तव्यंधर्मकोविदैः ॥ १७ ॥  
 ब्रूहिधर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मस्थूलञ्चविस्तरात् ।  
 व्यासवाक्यावसानेतु मुनिमुख्यःपराशरः ॥ १८ ॥  
 धर्मस्यनिर्णयंप्राह सूक्ष्मस्थूलञ्चविस्तरात् ।  
 शृणुपुत्रप्रवक्ष्यामि शृण्वन्तुमुनयस्तथा ॥ १९ ॥  
 कल्पेकल्पे क्षयोत्पत्तौ ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।  
 श्रुतिस्मृतिसदाचार-निर्णेतारश्चसर्वदा ॥ २० ॥

शातातप, हारीत, याज्ञवल्क्य आपस्तम्ब शंख, लिखित, ॥ १४ ॥ कात्यायन  
 प्रचेता इन सब ऋषि मुनियों के कहे बनाये धर्मशास्त्र मैंने सुने हैं तथा  
 आप के कहे वेद के अर्थ भी हम ने सुने और उन को हम भूले भी नहीं  
 हैं ॥ १५ ॥ इस मन्वन्तर तथा कृत त्रेता आदि युगों में जो धर्म किये गये  
 थे वे सब कलियुग में नष्ट हो गये ॥ १६ ॥ धर्मका मर्म जानने वालों के लिये जो  
 चारों वर्णों को कर्तव्य है वह चारों वर्णों का किञ्चित्साधारण आचार कहिये ॥ १७ ॥  
 हे धर्म के स्वरूप को जानने वाले ! सूक्ष्म और स्थूल आचार को विस्तार से कहिये ।  
 इस प्रकार व्यास जी के वचनों के पूर्ण होने पर मुनियों में मुख्य पराशरजी ने ॥ १८ ॥  
 सूक्ष्म और स्थूल धर्म का निर्णय विस्तार से कहा हे पुत्र ! व्यास जी । तथा अन्य  
 मुनियों ! तुम सुनो ॥ १९ ॥ कल्प २ में प्रलय तथा सृष्टि होने पर ब्रह्मा विष्णु और शिव  
 ये तीनों श्रुति, स्मृति, और सदाचार के निर्णय करने वाले हैं । ॥ २० ॥ परन्तु

नकश्चिद्वेदकर्त्ताच वेदस्मर्त्ताचतुर्मुखः ।  
 तथैवधर्मान्स्मरति मनुःकल्पान्तरान्तरे ॥ २१ ॥  
 अन्येकृतयुगेधर्मा स्वेतायांद्वापरेपरे ।  
 अन्येकलियुगेनृणां युगरूपाऽनुसारतः ॥ २२ ॥  
 तपःपरंकृतयुगे त्रेतायांज्ञानमुच्यते ।  
 द्वापरेयज्ञमेवाहुर्दानमेकंकलौयुगे ॥ २३ ॥  
 कृतेतुमानवाधर्मास्वेतायांगौतमाःस्मृताः ।  
 द्वापरेशंखलिखिताः कलौपाराशराःस्मृताः ॥ २४ ॥  
 त्यजेद्वेशंकृतयुगे त्रेतायांग्राममुत्सृजेत् ।  
 द्वापरेकुलमेकन्तु कर्त्तारंतुकलौयुगे ॥ २५ ॥  
 कृतेसंभाषणादेव त्रेतायांस्पर्शनेनच ।  
 द्वापरेत्वन्नमादाय कलौपततिकर्मणा ॥ २६ ॥

वेद का बनाने वाला कोई नहीं है ( इसी से वेद अपौरुषेय कहाता है ) किन्तु चतु-  
 र्मुख ब्रह्मा जी पूर्व कल्प के अभ्यास किये वेद का सर्गारम्भ में स्मरण करने वाले  
 हैं उसी प्रकार मनु जी कल्प २ में तथा प्रत्येक मन्वन्तर में धर्मों का स्मरण करते हैं ।  
 ॥ २१ ॥ सत्ययुग, त्रेता, और द्वापर तथा कलियुग में देशकाल और पात्रोंमें शक्ति  
 भेदानुसार मनुष्य का धर्म भिन्न २ हो जाता बदलता रहता है ॥ २२ ॥ सत्ययुग में  
 तप, त्रेता में ज्ञान, द्वापर में यज्ञ और कलियुग में एक दान को ही मुख्य  
 कहते हैं ( इसी बात को चाहें यों कहो वा मानो कि तप ज्ञान यज्ञ और दान ये धर्म  
 के चार प्रग हैं उन में से सत्ययुगी तप को, त्रेतायुगी ज्ञान को, द्वापरयुगी यज्ञ को  
 और कलियुगी धर्मात्मा दानको मुख्य कर्त्तव्य मानते हैं ) ॥ २३ ॥ सत्ययुगमें मनु के कहे  
 त्रेता में गौतम के कहे धर्म विशेष कर चल सकते हैं द्वापर में शंख और लिखित  
 को तथा कलियुग में पराशर के कहे धर्म मानने उचित हैं ॥ २४ ॥ सत्ययुग में धर्म  
 हीन देश को और त्रेता में धर्म विरोधी ग्राम को द्वापर में धर्म विरोधी कुल को और  
 कलियुग में अधर्म करने वाले मनुष्य को त्याग दे ॥ २५ ॥ सत्ययुग में अधर्मों के साथ  
 संभाषण करनेसे, त्रेतामें उसके स्पर्शकरनेसे द्वापर में अन्न लेकर और कलियुग में  
 धर्म करने से पतित होता है ॥ २६ ॥ सत्ययुग में उसी समय और त्रेता में दशदिन

कृतेतात्क्षणिकःशापस्त्रेतायां दशभिर्द्विनैः ।  
 द्वापरैचैकमासेन कलौसंवत्सरेण तु ॥ २७ ॥  
 अभिगम्यकृतेदानं त्रेतास्वाहूयदीयते ।  
 द्वापरयाचमानाय सेवयादीयते कलौ ॥ २८ ॥  
 अभिगम्योत्तमं दानमाहूयैव तु मध्यमम् ।  
 अधमं याच्यमानं स्यात् सेवादानन्तु निष्फलम् ॥ २९ ॥  
 जितोधर्मा ह्यधर्मेण सत्यं चैवानृतेन च ।  
 जिताश्चौरैश्च राजानः स्त्रीभिश्च पुरुषा जिताः ॥ ३० ॥  
 सीदन्ति चाग्निहोत्राणि गुरुपूजाप्रणश्यति ।  
 कुमार्यश्च प्रसूयन्ते तस्मिन्कलियुगे सदा ॥ ३१ ॥  
 कृते त्वस्थिगताः प्राणास्त्रेतायां मांसमाश्रिताः ।  
 द्वापरेरुधिरं यावत् कलौ त्वन्नादिषु स्थिताः ॥ ३२ ॥  
 युगे युगे च ये धर्मास्तत्र तत्र च ये द्विजाः ।  
 तेषां निन्दानकर्त्तव्या युगरूपाहिते द्विजाः ॥ ३३ ॥

में शाप लगता द्वापर में एक महीने में और कलियुग में एक वर्ष में शाप लगता है  
 ॥ २७ ॥ सत्ययुग में ब्राह्मण के समीप जाकर त्रेता में ब्राह्मण को अपने घर पर बुला-  
 कर द्वापर में माँगने पर और कलियुग में जो सेवा करे उसे दान देते हैं अर्थात्  
 दान के ये चार दर्जे हैं ॥ २८ ॥ [श्लोक ३२ तक सब कथन अनुवाद हैं विधि नहीं]  
 ब्राह्मण के समीप जाकर दान देना सद्युगी सर्वोत्तम है और बुलाकर जो दिया वह  
 मध्यम माँगने वाले को जो दिया वह अधम और सेवक को जो दिया वह निष्फल  
 है ॥ २९ ॥ कलियुग में अधर्म से धर्म, भूठ से सत्य औरों से राजा और स्त्रियों से  
 पुरुष जीत लिये जाते अर्थात् दब जाते हैं ॥ ३० ॥ अग्निहोत्र बन्द हो जाते गुरु  
 पूजा नष्ट हो जाती है कुमारी कन्याओं के सन्तान होते ये काम सदैव प्रत्येक  
 कलियुग में होते हैं ॥ ३१ ॥ सत्युग में प्राण हाड़ों में रहते त्रेता में मांस में द्वापर में  
 रुधिर में और कलियुग में अन्न आदि में रहते हैं ॥ ३२ ॥ जिस २ युग में जो २ धर्म  
 होते हैं और उस २ युग में जो ब्राह्मण हैं उनकी निन्दा न करनी चाहिये क्योंकि

युगेयुगेतुसामर्थ्यं शेषंमुनिविभाषितम् ।  
 पराशरेणचाप्युक्तं प्रायश्चित्तंविधीयते ॥ ३४ ॥  
 अहमद्यैवतत्सर्वमनुस्मृत्यब्रवीमिवः ।  
 चातुर्वर्ण्यसमाचारं शृण्वन्तुऋषिपुङ्गवाः ॥ ३५ ॥  
 पराशरमतंपुण्यं पवित्रपापनाशनम् ।  
 चिन्तितंब्राह्मणार्थाय धर्मसंस्थापनायच ॥ ३६ ॥  
 चतुर्णामपिवर्णानां-माचारोधर्मपालकः ।  
 आचारभ्रष्टदेहानां भवेद्दुर्मःपराङ्मुखः ॥ ३७ ॥  
 षट्कर्माभिरतो नित्यं देवतातिथिपूजकः ।  
 हुतशेषन्तुभुञ्जानो ब्राह्मणोनात्रसीदति ॥ ३८ ॥  
 स्नानंसन्ध्याजपोहोमो स्वाध्यायोदेवतार्चनम् ।  
 आतिथ्यवैश्वदेवंच षट्कर्माणिदिनेदिने ॥ ३९ ॥  
 प्रियोवायदिवाद्द्वेष्ट्यो मूर्खःपण्डितएववा ।  
 संप्राप्तोवैश्वदेवान्ते सोऽतिथिःस्वर्गसंक्रमः ॥ ४० ॥

वे.युग के अनुसार हैं ॥३३॥ मित्र २ युगों में जो सामर्थ्य मुनियों ने कहा है और पराशर जी ने भी जो कहा है उसके अनुसार प्रायश्चित्त का विधान किया जाता है ॥ ३४ ॥ उस सबको अभी स्मरण करके हम कहते हैं हे ऋषियोंमें उत्तम पुरुषो! चारों वर्णों का आचरण सुनो ॥३५॥ क्योंकि पराशर का मत पुण्यका उत्पादक पवित्र तथा पापों का नाशक है जो मत ब्राह्मणों के लिये तथा धर्म की स्थिति के लिये विचारा है ॥ ३६ ॥ चारों वर्णों का जो आचार है वही धर्म का रक्षक जानो जिन का देह आचार से भ्रष्ट है उन से धर्म भी पराङ्मुख होता पीठ फेर लेता है ॥ ३७ ॥ जो छः कर्मों में नित्य तत्पर है तथा देवता और अतिथि का पूजन करता है और जो होम करके शेष बचे अन्नको खाता है वह ब्राह्मण दुःखी नहीं होता ॥३८॥ स्नान सन्ध्या जप होम २ विधि पूर्वक वेदाध्ययन ३ और देवप्रतिमाओं का पूजन अतिथिकी सेवा ४ तथा वैश्वदेव इन षट् कर्मों को प्रतिदिन करे । सन्ध्या स्नान जप ये तीनों अङ्गाङ्गिरस से एक हैं ॥ ३९ ॥ प्यारा हो वा शत्रु मूर्ख हो वा पण्डित जो वैश्वदेव के अन्त में प्राप्त हो वह अतिथि स्वर्ग में पहुंचाने वाला है ॥ ४० ॥ जो दूर से आया हो

दूराञ्चोपगतंश्रान्तं वैश्वदेवउपस्थितम् ॥  
 अतिथिंतंविजानीयान्नातिथिःपूर्वमागतः ॥ ४१ ॥  
 नैकग्रामीणमतिथिं विप्रंसाङ्गमिकंतथा ।  
 अनित्यंह्यागतोयस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ ४२ ॥  
 अतिथिंतत्रसंप्राप्तं पूजयेत्स्वागतादिना ।  
 तथासनप्रदानेन पादप्रक्षालनेनच ॥ ४३ ॥  
 श्रद्धयाचान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेणच ।  
 गच्छतश्चानुयानेन प्रीतिमुत्पादयेद्गृही ॥ ४४ ॥  
 अतिथिर्यस्यभग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्त्तते ।  
 पितरस्तस्यनाश्नन्ति दशवर्षाणिपञ्च ॥ ४५ ॥  
 काष्ठभारसहस्रेण घृतकुम्भशतेनच ।  
 अतिथिर्यस्यभग्नाशस्तस्यहोमोनिरर्थकः ॥ ४६ ॥  
 सुक्षेत्रेवापयेद्वीजं सुपात्रेनिःक्षिपेद्वनम् ।  
 सुक्षेत्रेचसुपात्रेच ह्युपंदत्तंननश्यति ॥ ४७ ॥  
 नपृच्छेद्गोत्रचरणे नस्वाऽध्यायंश्रुतंतथा ।  
 हृदयेकल्पयेद्देवं सर्वदेवमयोहिंसः ॥ ४८ ॥

थक गया हो वैश्वदेव के समय उपस्थित हो उस को अतिथि जाने पहिले आज्ञा के  
 वा-ठहरे हुए को नहीं ॥ ४१ ॥ एक गांवमें रहने वाले ब्राह्मण को तथा मेली ब्राह्मण  
 को अतिथि कभी न माने क्योंकि नित्य जोन आवे उसे ही अतिथि कहा जाता है ॥ ४२ ॥  
 उस समय ( वैश्वदेव में ) आवे अतिथि का ( स्वागत ) आदि से पूजन करे । तथा  
 वैसे ही आसन देने पग धोने ॥ ४३ ॥ श्रद्धा से अन्न देने प्रिय तथा मधुर प्रश्न और  
 उत्तरों से जाते के पीछे चलने से गृहस्थी पुरुष अतिथि को प्रसन्न करे ॥ ४४ ॥ जिस  
 के घर से निराश होकर अतिथि चला जाता है उस के यहां पितर पन्द्रह वर्ष तक  
 नहीं खाते ॥ ४५ ॥ काष्ठ के हजार बोकों से घी के सौ घड़ों से भी उसका होम बूथा  
 है जिस के यहां से अतिथि निराश होकर लौट जाता है ॥ ४६ ॥ अच्छे खेत में बीज  
 बोवे और सुपात्र को धन देवे क्योंकि अच्छे खेत में बोया बीज तथा सुपात्र को दिया  
 दान नष्ट नहीं होता ॥ ४७ ॥ गोत्र वा चरण ( नाम कठ कौथुमादि ) ब्रह्मयज्ञ और वेदा-  
 ध्ययन इनको भी न पूछे अपने हृदय में अतिथि को देवता समझे क्योंकि अतिथि सब  
 देवताओं का रूप है ॥ ४८ ॥

अपूर्वःसुव्रतोविप्रो ह्यपूर्वश्रांतिथिस्तथा ।  
 वेदाभ्यासरतो नित्यं त्रयोऽपूर्वादिनेदिने ॥ ४९ ॥  
 वैश्वदेवेतुसंप्राप्ते भिक्षुकैर्गृहमागते ।  
 उद्धृत्यवैश्वदेवार्थं भिक्षां दत्त्वा विसर्जयेत् ॥ ५० ॥  
 यतिश्च ब्रह्मचारी च पक्वान्नस्वामिनावुभौ ।  
 तयोरन्नमदत्वा च भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ ५१ ॥  
 दद्याच्च भिक्षा त्रितयं परिब्राट् ब्रह्मचारिणाम् ।  
 इच्छया च ततो दद्याद्विभवे सत्यवारितम् ॥ ५२ ॥  
 यतिहस्ते जलं दद्याद् भैक्षं दद्यात्पुनर्जलम् ।  
 तद्भैक्षं मेरुणा तुल्यं तज्जलं सागरोपमम् ॥ ५३ ॥  
 यस्य छत्रं हयश्चैत्र कुञ्जरारोहमृद्धिमत् ।  
 ऐन्द्रं स्थानमुपासीत तस्मात्तन्नविचारयेत् ॥ ५४ ॥  
 वैश्वदेवकृतं पापं शक्नोति भिक्षुर्व्यपोहितम् ।  
 नहि भिक्षुकृतं दोषं वैश्वदेवो व्यपोहति ॥ ५५ ॥

अच्छे व्रत नियम वाला ब्राह्मण-और ऐसा ही अतिथि और नित्य २ वेद का पढ़ने वाला ये तीनों प्रतिदिन भी अपूर्य ( नवीन ) ही समझे जाते हैं ॥ ४९ ॥ वैश्व-  
 देव के समय यदि भिक्षुक घर में आवे तो वैश्वदेव के लिये पृथक् अन्न निकाल कर  
 भिक्षा देके विदा करे ॥ ५० ॥ यति संन्यासी और ब्रह्मचारी ये दोनों पक्षे अन्न के  
 अधिकारी हैं उन दोनों को बिना अन्न दिये जो भोजन करे वह चांद्रायण व्रत का  
 प्रायश्चित्ती होता है ॥ ५१ ॥ संन्यासी और ब्रह्मचारियों को तीन खुराक तक भिक्षा  
 देवे यदि घन होय तो अपनी इच्छा से और भी देवे ॥ ५२ ॥ पहिले संन्यासी के हाथ  
 में जल दे फिर अन्न दे पीछे भोजनान्त में फिर जल देवे वह भिक्षा मेरु पर्वत के और  
 वह जल समुद्र के समान दान है ॥ ५३ ॥ जिस विरक्त संन्यासी को दिव्य हाथी घोड़ा  
 छत्रादि सर्वग्य देवराज इन्द्र की संपत्ति अपने कर्मानुसार प्राप्त होसकती है इस कारण  
 भिक्षु अतिथि की परीक्षा का विचार न करे ॥ ५४ ॥ संन्यासी का सत्कार अवश्य  
 करे वैश्वदेव के भूल जाने के दोष को भिक्षु दूर कर सकता है पर भिक्षु के लौट  
 जाने से हुए पाप को वैश्वदेव दूर नहीं कर सकता ॥ ५५ ॥

अंकुत्वा वैश्वदेवं तु भुञ्जते ये द्विजाधमाः ।  
 सर्वे ते निष्फलाज्ञेयाः पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥ ५६ ॥  
 वैश्वदेवविहीना ये आतिथ्येन बहिष्कृताः ।  
 सर्वे ते नरकं यान्ति काकयोनिं व्रजन्ति च ॥ ५७ ॥  
 शिरो वेष्ट्य तु यो भुङ्क्ते दक्षिणाभिमुखस्तु यः ।  
 वामपादे करं न्यस्य तद्वैरक्षांसि भुञ्जते ॥ ५८ ॥  
 यतयेकाञ्चनं दत्त्वा ताम्बूलं ब्रह्मचारिणे ।  
 चोरेभ्योऽप्यभयं दत्त्वा दातापि नरकं व्रजेत् ॥ ५९ ॥  
 शुक्लवस्त्रं च यानं च ताम्बूलं घातुमेव च ।  
 प्रतिगृह्य कुलं हन्यात् प्रतिगृह्णाति यस्य च ॥ ६० ॥  
 चोरो वायदिचाण्डालः शत्रुर्वापि घातकः ।  
 वैश्वदेवे तु संप्राप्ते सोऽतिथिः स्वर्गसंक्रमः ॥ ६१ ॥  
 न गृह्णाति तु यो विप्रो ह्यतिथिं वेदपारगम् ।  
 अददन्नन्मात्रन्तु भुक्त्वा भुङ्क्ते तु किल्बिषम् ॥ ६२ ॥

जो द्विजों में नीच पुरुष वैश्वदेव कर्म किये बिना भोजन करते हैं उन का सब जीवन निष्फल है और वे अशुच नरक में पड़ते हैं ॥ ५६ ॥ जो वैश्वदेव से रहित द्रुप अतिथि का सत्कार नहीं करते वे सब नरक में जाते हैं तदनन्तर कौवे की योनि को प्राप्त होते हैं ॥ ५७ ॥ जो मनुष्य शिर में पगड़ी आदि बांध कर वादक्षिण को मुख करके भोजन करता है तथा बाँये पग पर हाथ रख कर खाता है उस अन्न को राक्षस का जाते हैं अर्थात् भोजन का यह राक्षसी प्रकार है ॥ ५८ ॥ संन्यासी को सुवर्ण ब्रह्मचारियों को पान और चोरों को अभय दान देकर दाता भी नरक में जाता है ॥ ५९ ॥ सफेद वस्त्र, सवारी, पान, और घातु इनका दान लेने वाला यति अपने और दाता के कुल का नाश करता है ॥ ६० ॥ चौर हो वा चाण्डाल हो और चाहे पिता को मारने वाला शत्रु भी हो परन्तु वैश्वदेव के समय आया हो तो वह अतिथि स्वर्ग में ले जाने वाला है ॥ ६१ ॥ जो ब्राह्मण वेदका पार जानने वाला अतिथि का नहीं ग्रहण करता अर्थात् ऐसे अतिथि का पूजन नहीं करता वह अतिथि को नहीं दिये अन्न रूप में पाप का भागी होता है ॥ ६२ ॥

ब्राह्मणस्यमुखंक्षेत्रं सर्वोत्तममकण्टकम् ।  
 वापयेत्सर्वबीजानि साकृपिःसार्वकामिका ॥ ६३ ॥  
 सुक्षेत्रेवापयेद्बीजं सुपात्रेनिःक्षिपेद्भुनम् ।  
 सुक्षेत्रेचसुपात्रेच ह्युप्तं दत्तन्ननश्यति ॥ ६४ ॥  
 अव्रताह्यनधीयाना यत्रभैक्षचराद्विजाः ।  
 तंग्रामंदण्डयेद्भ्राजा चौरभक्तप्रदोहिसः ॥ ६५ ॥  
 क्षत्रियोहिप्रजारक्षन् शस्त्रपाणि प्रदण्डवान् ।  
 निर्जित्यपरसैन्यानि क्षितिंधर्मेणपालयेत् ॥ ६६ ॥  
 नश्रोःकुलक्रमायाता भूषणोल्लिखिताऽपिवा ।  
 खड्गेनाक्रम्यभुञ्जीत वीरभोग्यांवसुन्धराम् ॥ ६७ ॥  
 पुष्पंपुष्पंविचिन्वीत मूलच्छेदनकारयेत् ।  
 मालाकारइवाऽरामे नयथाङ्गारकारकः ॥ ६८ ॥  
 लाभकर्मतथारत्नं गवांचपरिपालनम् ।  
 कृषिकर्मचवाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ ६९ ॥

ब्राह्मण का मुख कांटे रहित और जल विहीन सर्वोत्तम खेत है उसी में सब बीज बोवे  
 क्योंकि यही खेती सब कामनाओं को देने वाली है ॥ ६३ ॥ अच्छे खेत में बीज बोवे  
 और सुपात्र को धन देवे । अच्छे खेत में बोया अन्न और सुपात्र को दिया धन नष्ट  
 नहीं होता ॥ ६४ ॥ जिस ग्राम में व्रतों को न करते और वेद को न पढ़े हुए ब्राह्मण  
 भिक्षा मांगते हैं उस ग्राम को राजा दण्ड दे क्योंकि वह ग्राम चोरों को भाग देता है  
 ॥ ६५ ॥ दण्डनीत्यनुसार शस्त्र को हाथ में लिये प्रजा की रक्षा करता हुआ क्षत्रिय  
 शत्रुओं की सेनाओं को जीत कर धर्मानुकूल पृथ्वी की पालना करे ॥ ६६ ॥ क्योंकि  
 लक्ष्मी कुछ कुल परम्परा से नहीं आती और भूषणों से भी नहीं जानी जाती किन्तु  
 अपने शस्त्रयुद्ध से शत्रुओं को जीत कर पृथ्वी को भोगे क्योंकि पृथ्वी शूरवीरों को  
 भोगने योग्य है ॥ ६७ ॥ राजा को चाहिये कि जैसे माली वगीचे के वृक्षों की रक्षा  
 रखता हुआ फूल २ तोड़ लेता है किन्तु मूलोच्छेद नहीं करता वैसे ही प्रजा की  
 रक्षा करता हुआ राजा उस से धनादि लिया करे किन्तु कोइला बनाने वाला जैसे  
 जड़ से वृक्षों को काट डालता है वैसे प्रजा की जड़ न बिगाड़े ॥ ६८ ॥ लाभ का  
 काम, रक्षादि की परीक्षा तथा बैचन गौओं की अच्छी रक्षा, खेती करना व्यापार ये  
 वैश्य की वृत्ति ( जीविका ) कही हैं ॥ ६९ ॥

शूद्राणां द्विजशुश्रूषा परमोधर्मोत्तमः ।

अन्यथा कुरुते किञ्चित्तद्वेत्तस्य निष्फलम् ॥ ७० ॥

लवणं मधु तैलञ्च दधितक्रंघृतं पयः ।

न दुग्धेच्छूद्रजातीनां कुर्यात्सर्वेषु विक्रयम् ॥ ७१ ॥

विक्रीणन्मद्यमांसानि ह्यभक्ष्यस्य च भक्षणम् ।

कुर्वन्त गम्यागमनं शूद्रः पतिततत्क्षणात् ॥ ७२ ॥

कपिलाक्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेन च ।

वेदाक्षरविचारेण शूद्रस्य नरकं भ्रुवम् ॥ ७३ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अतः परं गृहस्थस्य धर्माचारं कलौ युगे ।

धर्मसाधारणं शक्यं चातुर्वर्ण्याश्रमागतम् ॥ १ ॥

संप्रवक्ष्याम्यहंपूर्वं पाराशरवचो यथा ।

षट्कर्मसहितो विप्रः कृपिकर्माणिकारयेत् ॥ २ ॥

और शूद्रों का परम धर्म द्विजों की सेवा करना कहा है । इस मुख्य कर्त्तव्य को सर्वथा छोड़ जो कुछ धर्म सम्बन्धी कृत्य शूद्र करता है तो वह उस का निष्फल है ॥७०॥ लवण, मधु(शहद) तेल, दही, मठा, घी और दूध ये शूद्रों के स्पर्श किये दूषित नहीं हैं इनको शूद्र सब जातियोंमें बेंचे ॥७१॥ मदिरा और मांसको बेंचता, अभक्ष्यका भक्षण करता और गमन करनेके अयोग्य ब्राह्मणी आदि स्त्री के संग गमन करता हुआ शूद्र उसी क्षण में पतित हो जाता है ॥७२॥ कपिला गौ का दूध पीने ब्राह्मणी के संग गमन करने, और वेद के अक्षरों का विचार करने से शूद्र को निश्चय नरक होता है ।

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे १ अध्यायः ॥

इस के अनन्तर कलियुग में गृहस्थ का धर्म आचार और चारों वर्णों तथा आश्रमों का यथाशक्ति साधारण धर्म जो है ॥ १ ॥ उसको हम पहिले पाराशर के वचनानुसार कहेंगे । छः कर्मों सहित ब्राह्मण खेती के काम भी करावे ॥ २ ॥ ऐसे विल को न जुनं-

क्षुधितं तृषितं त्रान्तं बलीवर्द्धनयोजयेत् ।  
 होनाद्व्याधितं क्लीबं वृषं विप्रो न वाहयेत् ॥ ३ ॥  
 स्थिराङ्गनीरुजं द्रुमं सुनर्द्धं षण्ढवर्जितम् ।  
 वाहयेद्विषसस्याद्धं पश्चात्स्नानं समाचरेत् ॥ ४ ॥  
 जपं देवार्चनं होमं स्वाध्यायं साङ्गमभ्यसेत् ।  
 एकद्वित्रिचतुर्विप्रान् भोजयेत्स्नातकान् द्विजः ॥ ५ ॥  
 स्वयं कृष्टे तथा क्षेत्रे धान्यैश्च स्वयमर्जितैः ।  
 निर्वपेत्पञ्चयज्ञांश्च क्रतुदीक्षां च कारयेत् ॥ ६ ॥  
 तिलारसानविक्रेया विक्रेया धान्यतत्समाः ।  
 विप्रस्यैव विधावृत्तिस्तृणकाष्ठादिविक्रयः ॥ ७ ॥  
 ब्राह्मणस्तु कृषिकृत्वा महादोषमवाप्नुयात् ।  
 अष्टागवन्धर्म्यहलं षड्गवन्वृत्तिलक्षणम् ॥ ८ ॥  
 चतुर्गवन्तृशंसानां द्विगवंगोजिघांसिनाम् ।  
 द्विगवन्वाहयेत्पादं मध्याह्नं तु चतुर्गवम् ॥ ९ ॥

बाबे जो भूखा प्यासा थका किसी अंग से हीन रोगी-और नपुंसक हो ॥ ३ ॥ जो  
 स्त्रिरांग (जिस के अंग सब पुष्ट हों) रोग रहित-उद्धत खूब शब्द करता हो-जो बधिया  
 न किया गया हो-ऐसे बैल को आधे दिन जुतवावे और पीछे स्नान करे ॥ ४ ॥ जप  
 देवताओं की पूजा होम और छः अङ्गों सहित वेद का पाठ इन का अभ्यास करे और  
 यक, दो, तीन, वा चार ब्राह्मणों ( जो ब्रह्मचर्य समाप्त करके गृहधर्म में आये हों )  
 को भोजन करावे ॥ ५ ॥ आप जोते खेत में और आप ही पैदा किये अर्धों से पंचयज्ञ  
 करे और यज्ञ की दीक्षा भी करावे ॥ ६ ॥ तिल तथा छः रसों को न बँचे । अन्न और  
 जो अन्न के समान हैं उन को, और तृण काठ आदिको बँचे । ब्राह्मणकी यह जीविका  
 चौर्यवृत्तियोंमें है ॥ ७ ॥ जो ब्राह्मण खेती करे तो महादोषको प्राप्त हो-तथापि यदि आपत्  
 कालमें खेती करनी पड़े तो ऋतु बैलका हल धर्मानुकूल है, छः बैल जिसमें हों वह मध्यम  
 जीविका के लिये है ॥ ८ ॥ चार जिसमें बैल हों वह हिंसकों का है दो बैलों का हल  
 जोतने वाला गोहस्तारके सहित है, दो बैल वाले हल को चौथाई दिन जोते चार बैल  
 को हल को मध्याह्न तक जोते ॥ ९ ॥

यद्गर्वतुत्रियामाहेष्टमिः पूर्णतुवाहयेत् ।  
 नयातिनरकेष्वेवं वर्त्तमानस्तु वैद्विजः ॥ १० ॥  
 दानंदद्याद्धवैतेषां प्रशस्तं स्वर्गसाधनम् ।  
 संवत्सरेण यत्पापं मत्स्यघाती समान्नुयात् ॥ ११ ॥  
 अयोमुखेन काष्ठेन तदेकाहेन लाङ्गली ।  
 पाशकी मत्स्यघाती च व्याधः शाकुनिकस्तथा ॥ १२ ॥  
 अदाता कर्षकश्चैव पञ्चैते समभागिनः ।  
 कण्डनीपेपणीचुल्ही उदकुम्भी च मार्जनी ॥ १३ ॥  
 पञ्चसूना गृहस्थस्य अहन्यहनि वर्त्तते ।  
 वैश्वदेवो बलिर्भिक्षा गोघ्रासो हन्तकारकः ॥ १४ ॥  
 गृहस्थः प्रत्यहं कुर्वात्सूनादोषैर्न लिप्यते ।  
 वृक्षाच्छित्त्वामर्ही भित्त्वा हत्वा च कृमिकीटकान् ॥ १५ ॥  
 कर्षकः खलु यज्ञेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ।  
 योनदद्याद्द्विजातिभ्यो राशिमूलमुपागतः ॥ १६ ॥

छः बौलों के हल को दिन के तीन पहर और आठ बौलों के हल को सब दिन जोते ऐसे  
 वर्त्तता हुआ द्विज नरक में नहीं जाता ॥ १० ॥ स्वर्ग का उत्तम साधन दान ब्राह्मणों को  
 ही देवे । मच्छियों को मारने वाला एक वर्ष में जिस पाप का भागी होता है ॥ ११ ॥  
 लोहा है मुख में जिस के ऐसे काठ ( हल ) वाला ब्राह्मण एक दिन में उस पापका  
 भोगने वाला होता है । १-पाशक ( फांसी देके मारने वाला, ) २-मच्छियों का मारने  
 वाला, ३-हिरणादि को मारने वाला अधिक ४-पक्षियों को पकड़ने वाला ॥ १२ ॥ तथा  
 पांचवां जो दान न देवे और खेती करने वाला हो-ये पांचों एक ही प्रकार के समान  
 पाप भागी हैं । ओखली, चक्री, चूल्हा, जल के घड़े, मार्जनी ( बुहारी ) ॥ १३ ॥ ये पांच  
 हत्या गृहस्थ पुरुष को नित्य २ लगती हैं । वैश्वदेव ( देवयज्ञ ) बली ( भूतयज्ञ ) भिक्षा  
 देना, गोघ्रास, और हन्तकार नाम अतिथियज्ञ ॥ १४ ॥ इन पांचों को जो गृहस्थ प्रतिदिन  
 करता है वह पूर्वोक्त पांच हत्याओं के दोषसे लिप्त नहीं होता । वृक्षों को काटने पृथ्वी के  
 खोदने, कृमि और कीड़ों के मारनेसे जो पाप खेती में होता है ॥ १५ ॥ खेती करने वाला यज्ञ  
 करनेसे उन सय पापोंसे छूट जाता है । जिसके भग्नकी राशि हुई हो और वह समीपमें

सचौरःसचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नंतंविनिर्दिशेत् ।  
 राज्ञेदत्वातुषड्भागं देवानांचैकविंशकम् ॥ १७ ॥  
 विप्राणांत्रिंशकंभागं कृषिकर्त्तानलिप्यते ।  
 क्षत्रियोपिकृषिकृत्वा देवान्विप्रांश्चपूजयेत् ॥ १८ ॥  
 वैश्यःशूद्रस्तथाकुर्यात्कृषिवाणिज्यशिल्पकम् ।  
 विकर्मकुर्वतेशूद्रा द्विजशुश्रूषयोज्झिताः ॥ १९ ॥  
 भवन्त्यलपायुषस्तैवै निरर्थयान्त्यसंशयम् ।  
 चतुर्णामपिवर्णानां=मेषधर्मःसनातनः ॥ २० ॥  
 इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अतःशुद्धिंप्रवक्ष्यामि जननेमरणेतथा ।  
 दिनत्रयेणशुद्ध्यन्ति ब्राह्मणामेतसूतके ॥ १ ॥  
 क्षत्रियोद्वादशाहेन वैश्यःपञ्चदशाहकैः ।  
 शूद्रःशुद्ध्यतिमासेन पराशरवचोयथा ॥ २ ॥  
 उपासनेतुविप्राणामङ्गशुद्धिश्चजायते ।  
 ब्राह्मणानांप्रसूतौतु देहस्पर्शाविधीयते ॥ ३ ॥

आये ब्राह्मणों को न दे तो ॥ १६ ॥ वह चौर और पापी है उसे ब्रह्महत्यारा कहते हैं ।  
 छठा भाग राजा को और इक्कीसवां भाग देवताओं को ॥ १७ ॥ तीसवां भाग ब्राह्मणों  
 को जो देता है वह खेती के दोष से लिये नहीं होता । क्षत्रिय भी खेती करे तो  
 देवता और ब्राह्मणों की पूजा करे ॥ १८ ॥ तिसी प्रकार वैश्य और शूद्र भी खेती  
 वाणिज्य ( व्यापार ) और कारीगरी-इन को करें । द्विर्जा की सेवा को छोड़ कर  
 शूद्र लोग जो कर्म करते हैं वह छोटा काम है ॥ १९ ॥ और वे शूद्र थोड़ी अवस्थावाले  
 होते हैं और नरक में जाते हैं इसमें संशय नहीं चारों वर्णों का यह सनातनधर्म है ॥ २० ॥  
 इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे २ अध्यायः ॥

अब जन्म और मरण समय में शुद्धि को कहते हैं । मरने के सूतक में मध्य,  
 कोटि के धर्मनिष्ठ ब्राह्मण तीन दिन में शुद्ध होते हैं ॥ १ ॥ क्षत्रिय चारह दिन में वैश्य  
 पन्द्रह दिन में शूद्र एक महीने में पराशर के वचनानुसार शुद्ध होते हैं ॥ २ ॥ ब्राह्मणों  
 की सेवा करने से सेवक का देह शुद्ध हो जाता है । और जन्म सूतक में शूद्र को

जातौविप्रोदशाहेन द्वादशाहेनभूमिपः ।  
 वैश्यःपञ्चदशाहेन शूद्रोमासेनशुद्धयति ॥ ४ ॥  
 एकाहाच्छुद्धयतेविप्रो योऽग्निवेदसमन्वितः ।  
 त्र्यहात्केवलवेदस्तु द्विहीनोदशभिर्दिनैः ॥ ५ ॥  
 जन्मकर्मपरिभ्रष्टः सन्ध्योपासनवर्जितः ।  
 नामधारकविप्रस्तु दशाहंसूतकीभवेत् ॥ ६ ॥  
 अजागावोमहिष्यश्च ब्राह्मणीनवसूतिका ।  
 दशरात्रेणसंशुद्धयेद् भूमिस्थज्वनवोदकम् ॥ ७ ॥  
 एकपिण्डास्तुदायादाः पृथग्दारनिकेतनाः ।  
 जन्मन्यपिविपत्तौच तेषांतत्सूतकंभवेत् ॥ ८ ॥  
 उभयत्रदशाहानि कुलस्यान्तं न भुञ्जते ।  
 दानंप्रतिग्रहोहोमः स्वाध्यायश्चनिवर्त्तते ॥ ९ ॥

ब्राह्मण के देह का स्पर्श कहा है अर्थात् शूद्र के यहां होमादि से शुद्धि नहीं है । किन्तु शुद्धि के दिन पूरे हों तब स्नानादि करके ब्राह्मणों के चरणस्पर्श कर शूद्र शुद्ध होते हैं ॥ ३ ॥ जन्म सूतक में ब्राह्मण दशदिन में, क्षत्रिय बारह दिन में, वैश्य पन्द्रह दिन में, और शूद्र एक महीने में शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥ अग्निहोत्र और वेदाध्ययन दोनों धर्म कृत्य यथोक्त करने वाला ब्राह्मण एक दिन में, केवल वेदपाठी तीन दिन में और जो इन दोनों से हीन हो वह ब्राह्मण दश दिन में शुद्ध होता है ॥ ५ ॥ द्वितीय जन्म रूप उपनयनादि संस्कार से तथा कर्म से हीन और सन्ध्योपासन जो न करता हो ऐसा जो नाम धारण वाला ब्राह्मण वह दश दिन के सूतक का भागी होता है ॥ ६ ॥ वकरी-गौ-भैस-नवसूतिका ( जिस के प्रथम ही सन्तान हुआ हो ) ऐसी ब्राह्मणी और पृथ्वी पर ठहरा नूनन जल ये दश दिन में शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥ जो पिता के अंश के भागी हैं एक मा वाप से उत्पन्न हुए जिन के पुत्र्य २, स्त्री और घर हैं जन्म और मरण का सूतक उन सब को होता है ॥ ८ ॥ दोनों प्रकार के सूतकों में सूतक वालों का अन्न दश दिन तक अन्य लोगों को नहीं खाना चाहिये । दान देना, दान लेना, ग्रहण और होम भी सूतक में नहीं करना चाहिये ॥ ९ ॥

तावत्तत्सूतकंगोत्रे चतुर्थपुरुषेणतु ।  
 दायाद्विच्छेदमाप्नोति पञ्चमोवात्मवंशजः ॥  
 चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पणिशाःपुंसिपञ्चमे ।  
 षष्ठेचतुरहाच्छुद्धिः सप्तमेतुदिनत्रयात् ॥ ११ ॥  
 शृङ्गयग्निररणेचैव देशान्तरमृतेतथा ।  
 बालेमेतेचसंन्यस्ते सद्यःशौचंविधीयते ॥ १२ ॥  
 दशरात्रेष्वतीतेषु त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते ।  
 ततःसंवत्सरादूर्ध्वं सचैलंस्नानमाचरेत् ॥ १३ ॥  
 देशान्तरमृतःकश्चित्सगोत्रःश्रूयतेयदि ।  
 नत्रिरात्रमहोरात्रं सद्यःस्नात्वाशुचिर्भवेत् ॥ १४ ॥  
 आत्रिपक्षात्त्रिरात्रंस्यादापण्मासाञ्चपक्षिणी ।  
 अहःसंवत्सरादूर्वाकूसद्यःशौचंविधीयते ॥ १५ ॥  
 देशान्तरगतोविप्रः प्रयासात्कालकारितात् ।  
 देहनाशमनुप्राप्तस्तिथिर्नज्ञायतेयदि ॥ १६ ॥

एक गोत्रमें चौथी पीढ़ी तक ही पूरा सूतक भी होता है क्योंकि अपने वंशका पांचवाँ पुरुष सपिण्डता से विभक्त होजाने से ग्रंथक हो जाता है ॥ १० ॥ चतुर्थ पीढ़ी तक दश दिन पांचवीं पीढ़ी में छः दिन रात-छठी पीढ़ी में चार दिन और सातवीं पीढ़ी में तीन दिन में शुद्धि होती है ॥ ११ ॥ सींग वाले पशुओं से-वा अग्नि से मरने में वा देशान्तर के मरने में- बालक के मरने में और अपने कुटुम्बी संन्यासी के मरने में उसी समय शुद्धि हो जाती है ॥ १२ ॥ दश दिन बीत जाने पर विदेशमें सगोत्री का मरण सुने तो तीन दिनमें शुद्धि और एकवर्ष बाद सुने तो तत्काल वस्त्रों सहित स्नान करने से शुद्धि होती है ॥ १३ ॥ यदि देशान्तर में मरा सगोत्री अधिक काल बीतने पर सुना जाय तो तीन दिन वा एक दिन रात आशौच न माने किन्तु शीघ्र ही स्नान करने से तत्काल शुद्धि होती है ॥ १४ ॥ डेढ़ महीने तक सुननेपर तीन दिनमें शुद्धि छः महीनेमें सुने तो एक दिनरातमें शुद्धि करे, वर्ष भरके भीतर सुने तो एक दिन मात्रमें शुद्धि और पश्चात् वर्ष बीत जाने पर तत्काल शुद्धि कर लेवे ॥ १५ ॥ यदि देशान्तरमें गया ब्राह्मण देशकालानुसार किये विशेष परिश्रमसे मरजाय और मरनेकी तिथि मालूम नहो ॥ १६ ॥

कृष्णाष्टमीत्वमावास्या कृष्णाचैकादशीभ्याम् ।  
 उदकपिण्डदानंच तत्रश्राद्धं चकारयेत् ॥ १७ ॥  
 अजातदन्तायैवालाये च गर्भाद्विनिस्सृताः ।  
 न तेषामग्निसंस्कारो नाशौचं नोदकक्रिया ॥ १८ ॥  
 यदि गर्भो विपद्येत स्रवते वापि योषिताम् ।  
 यावन्मासं स्थितो गर्भो दिनं तावत्सूतकम् ॥ १९ ॥  
 आचतुर्थाद्वेत्स्वावः पातः पञ्चमषष्ठयोः ।  
 अत ऊर्ध्वं प्रसूतिः स्याद्दशाहं सूतकं भवेत् ॥ २० ॥  
 प्रसूतिकाले संप्राप्ते प्रसवे यदि योषिताम् ।  
 जीवापत्येतु गोत्रस्य मृते मातुश्च सूतकम् ॥ २१ ॥  
 शान्नावेषसमुत्पन्ने मृते रजसि सूतके ।  
 पूर्वमेव दिनं ग्राह्यं यावन्नोदयते रविः ॥ २२ ॥  
 दन्तजाते नुजाते च कृतचूडे च संस्थिते ।  
 अग्निसंस्करणं तेषां त्रिरात्रं सूतकं भवेत् ॥ २३ ॥

तो कृष्णपक्ष की आठ, अमावस, अथवा कृष्ण एकादशी में जलदान, पिण्डदान और श्राद्ध करे ॥ १७ ॥ जो दाँतों के निकलने से पहिले वा गर्भसे निकलते ही मर गये हों उनको अग्निका दाह, अशौच और जलदान ( तिलाञ्जलि ) नहीं करना चाहिये ॥ १८ ॥ यदि गर्भ में विपत्ति ( मरना ) हो जाय वा स्त्री का गर्भ ही गिर जाय तो जितने महीने का गर्भ हो उतने ही दिन का सूतक होता है ॥ १९ ॥ चार महीने तक का जो गर्भ गिरे उसे गर्मसाव कहते हैं, पाँच और छठे महीने का गिरे तो उसे गर्मपात कहते हैं इससे जागे प्रसूति होती है उसका सूतक जीवित रहे तो दश दिन का होता है ॥ २० ॥ स्त्रियों के प्रसव समय में यदि जीवित संतान पैदा हो तो चार पीढ़ी तक के गोत्र वालों को आशौच लगता और मरा पैदा हो तो केवल सोता को अशुद्धि लगती है ॥ २१ ॥ यदि रात्रि में मरा हुआ संतान पैदा हो या रजोधर्म हो तो सूतक वा अशुद्धि के लिये सूर्योदयसे पहिले बीते हुए दिनसे ही गणना करनी चाहिये ॥ २२ ॥ दाँत उगने के पीछे वा दाँत निकलते ही अथवा मुण्डन हो जाने पर बालक मर जगम

आदन्तजननात्तसद्य आचूडान्नैशिकीस्मृता ।  
 त्रिरात्रमाव्रतात्तेषां दशरात्रमतःपरम् ॥ २४ ॥  
 गर्भयदिविपत्तिः स्याद्दशाहं सूतकं भवेत् ।  
 जीवन्जातोयदिमृतः सद्यएवविशुद्ध्यति ॥ २५ ॥  
 स्त्रीणांचूडान्नआदानात्संक्रमात्तदधःक्रमात् ।  
 सद्यःशौचमथैकाहं त्रिरहःपितृवन्धषु ॥ २६ ॥  
 ब्रह्मचारीगृहेयेषां हूयतेचहुताशनः ।  
 संपर्कचेन्नकुर्वन्ति नतेषांसूतकंभवेत् ॥ २७ ॥  
 संपर्काद्दुष्यतेविप्रो जननेमरणेतथा ।  
 संपर्काच्चनिवृत्तस्य नमृतंनैवसूतकम् ॥ २८ ॥  
 शिल्पिनःकारुकावैद्या दासीदासाश्चनापिताः ।  
 राजानःप्रोत्रियाश्चैव सद्यःशौचाःप्रकीर्तिताः ॥ २९ ॥

तो उसका अग्निले दाह करे और तीन दिन रात अशुद्धि माने ॥ २३ ॥ दांतोंके निक-  
 लने से पहिले जो बालक मरे तो उसी समय, चूड़ाकर्म से पहिले मरे तो एक दिन  
 रात और यज्ञोपवीत से पहिले मरे तो तीन दिन रात का अशौच होता है इससे परे  
 दश दिन का होता है ॥ २४ ॥ यदि गर्भ में विपत्ति हो अर्थात् जीवित बच्चा पैदा हो-  
 कर मर जाय तो दश दिन और मरा हुआ पैदा हो तो तत्काल शुद्धि होती है ॥ २५ ॥  
 चूड़ा कर्म से पहिले कन्या मरे तो तत्काल शुद्धि होती सगाई से पहिले मरे तो एक  
 दिन रात वाग्दान होने पर सप्तपदी से पहिले मरे तो पितृ गोत्र वालों को तीन दिन  
 रात शुद्धि माननी चाहिये ॥ २६ ॥ जिनके घर में समिदाधान करता हुआ ब्रह्मचारी  
 रहता हो और वह यदि मर जाय तो जिन लोगोंने उसका स्पर्श नहीं किया उन्हें सूतक  
 नहीं लगता ॥ २७ ॥ जन्म और मरण सम्बन्धी सूतक में सात पीढ़ी वालों से भिन्न  
 ब्राह्मण स्पर्श करने से दूषित होता है यदि संपर्क न करे तो दोनों ही सूतक नहीं  
 लगते ॥ २८ ॥ शिल्पी ( चित्र बनाने वाले ) कारीगर, वैद्य, दासी ( दहलनी ) दास,  
 नाई राजा, चौर, वेदपाठी, इनकी उसी समय तत्काल शुद्धि होती है ॥ २९ ॥ जिनने

सत्रतीमन्त्रपूतश्च आहिताग्निश्चयोद्विजः ।  
 राज्ञश्चसूतकं नास्ति यस्य चेच्छतिपार्थिवः ॥ ३० ॥  
 उद्यतो निधने दाने आर्तो विप्रो निमन्त्रितः ।  
 तदैव ऋषिभिर्दुष्टं यथाकालेन शुद्ध्यति ॥ ३१ ॥  
 प्रसवे गृहमेधीतु न कुर्यात्सङ्करं यदि ।  
 दशाहाच्छुद्ध्यते माता त्ववगाह्यपिता शुचिः ॥ ३२ ॥  
 सर्वेषां शावमाशौचं मातापित्रोस्तु सूतकम् ।  
 सूतकं मातुरेव स्यादुपस्पृश्य पिता शुचिः ॥ ३३ ॥  
 यदि पत्न्यां प्रसूतायां संपर्कं कुरुते द्विजः ।  
 सूतकं तु भवेत्तस्य यदि विप्रः षडङ्गवित् ॥ ३४ ॥  
 संपूर्काज्जायते दोषो नान्यो दोषोऽस्ति वै द्विजे ।  
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संपर्कं वर्जयेद्बुधः ॥ ३५ ॥  
 विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरामृतसूतके ।  
 पूर्वसंकल्पितं द्रव्यं दीयमानं न दुष्यति ॥ ३६ ॥

किसी नियत काल तक व्रत ले रक्खा हो, वेदमन्त्रों के जपसे जो पवित्र हैं, जो द्विज विधिपूर्वक अग्नि स्थापन करके अग्निहोत्री हैं, राजा को और जिस के सूतक को राजा न चाहै उसको सूतक नहीं लगता है ॥ ३० ॥ दान में उद्यत ( तय्यार ) मनुष्य यदि मर जाय और आर्त ( दुःखी ) ब्राह्मण को दान देने का न्यौता दे रक्खा हो तो उसी दान के समय पर शुद्ध होता है यह ऋषियों ने जाना अर्थात् कहा है ॥ ३१ ॥ यदि जन्म सूतक में ब्राह्मण सूतिका का सङ्कर ( स्पर्श ) न करे तो माता दश दिन में और पिता स्नान करके शुद्ध हो जाता है ॥ ३२ ॥ शाव ( मुर्दे का ) आशौच छः पीढ़ी तक सब को और जन्मसूतक माता पिता को ही लगता है और उन दोनों में भी माता ही विशेषकर अशुद्ध होती है पिता तो स्नान करने से ही शुद्ध हो जाता है ॥ ३३ ॥ जिस ब्राह्मण की स्त्री प्रसूता हो और वह पत्नी का स्पर्श करे तो चाहै वह वेद के छः अंग का पण्डित भी हो तो उसे सूतक लगता है ॥ ३४ ॥ ब्राह्मण को संपर्क से दोष लगता है अन्य कुछ दोष नहीं है तिससे बड़े यज्ञसे ज्ञानवान् द्विज संपर्क न करे ॥ ३५ ॥ विवाह, उत्सव, यज्ञ, इनके बीच यदि भरण वा जन्म होजाय तो पूर्व संकल्पित किये

अन्तरातुदशाहस्य पुनर्मरणजन्मनी ।

तावत्स्यादशुचिर्विप्रो यावत्तत्स्यादनिर्दशम् ॥ ३७ ॥

ब्राह्मणार्थं विपन्नानां वन्दिगो ग्रहणे तथा ।

आहवेषु विपन्नानामेकरात्रमशौचकम् ॥ ३८ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमण्डलभेदिनौ ।

परिव्राड्योगयुक्तश्च रणे चाभिमुखो हतः ॥ ३९ ॥

यत्र यत्र हतः शूरः शत्रुभिः परिवेष्टितः ।

अक्षयां लभते लोकान् यदि क्लीवं न भापते ॥ ४० ॥

संन्यस्तं ब्राह्मणं दृष्ट्वा स्थानाच्च लतिभास्करः ।

एष मे मण्डलं भित्त्वा परं स्थानं प्रयास्यति ॥ ४१ ॥

यस्तु भग्नेषु सैन्येषु विद्रवत्सु समन्ततः ।

परित्राता यद्वा गच्छेत्स चक्रतुफलं लभेत् ॥ ४२ ॥

द्रव्य के देनेका दोष नहीं है ॥ ३६ ॥ यदि सूतक के दश आदि दिन पूरे होनेसे पहिले दूसरा मरण वा जन्म हो जाय तो ब्राह्मण तभी तक अशुद्ध होता है कि जब तक पहिले दश दिन पूरे हों ॥ ३७ ॥ ब्राह्मण के लिये मरे, भागे (कैदी) के तथा गौ के पकड़ने में जो मारे गये और संग्राम में जो मरे हैं इन सबको एक दिन रात का अशौच लगता है ॥ ३८ ॥ दो पुरुष जगत् में सूर्य मण्डल को भेदन कर ब्रह्मलोकको प्राप्त होने वाले हैं एक तो योग युक्त योगाभ्यासी संन्यासी और दूसरा जो संग्राम में सन्मुख मरा हो ॥ ३९ ॥ शत्रुओं से युद्ध में घेरा हुआ शूरीर पुरुष जहाँ २ मारा जाता है वह अक्षय लोकों को प्राप्त होता है यदि वह क्षीव (कातरता के बचन न कहें तो) ॥ ४० ॥ संन्यासी ब्राह्मण को देखकर सूर्य नारायण भी अपने स्थान से चलायमान हो जाते हैं क्योंकि सूर्यनारायण को मय हो जाता है कि यह संन्यासी मेरे मण्डल को लांघकर परम स्थान (ब्रह्मलोक) को जायगा ॥ ४१ ॥ जो शत्रुओं ने मारी पीटी और चारों ओर मागती हुई सेना के मनुष्यों की रक्षा के लिये जाता है वह यज्ञ के फल को पाता है ॥ ४२ ॥ जिस का शरीर घाण मुद्गर—लाठी

यस्यच्छेदक्षतंगात्रं शरमुद्गुरयष्टिभिः ।  
 देवकन्यास्तुतंवीरं हरन्तिरमयन्ति च ॥ ४३ ॥  
 देवाद्भूगनासहस्राणि शूरमायोधनेहतम् ।  
 त्वरमाणाः प्रधावन्ति ममभर्ता ममेति च ॥ ४४ ॥  
 यं यज्ञसंघैस्तपसाचविप्राः स्वर्गैषिणोवात्रयधैवयान्ति ।  
 क्षणेनयान्त्येवहितत्रवीराः प्राणान्सुयुद्धेनपरित्यजन्तः ॥ ४५ ॥  
 जितेनलभ्यते लक्ष्मीर्मृतेनापिवराहनाः ।  
 क्षणध्वंसिनिकायेस्मिन्काचिन्तामरणेरणे ॥ ४६ ॥  
 ललाटदेशाद्रुधिरं स्रवच्चयस्याहवेतुप्रविशेत वक्रत्रम् ।  
 तत्सोमपानेन किलास्यतुल्यसंग्रामयज्ञैर्विधिवच्चदृष्टम् ॥ ४७ ॥  
 अनाथं ब्राह्मणं प्रेतं येवहन्ति द्विजातयः ।  
 पदे पदे यज्ञफलमानुपूर्व्याल्लभन्ति ते ॥ ४८ ॥  
 न तेषां शुभं किञ्चिद् द्विजानां शुभकर्मणि ।  
 जलावगाहनात्तेषां सद्यः शीघ्रं विधीयते ॥ ४९ ॥

इनके प्रहार जन्म छिद्रों से घायल हुआ है उस मनुष्य को देवताओं की कन्या बुला ले जातीं और रमण करती हैं ॥ ४३ ॥ संग्राम में मारे गये शूरवीर के सम्मुख हजारों देवताओं की कन्या शीघ्रता करती हुई दौड़ती हैं कि यह मेरा भर्ता यह मेरा भर्ता हो ॥ ४४ ॥ यज्ञों के समूह और तप करके स्वर्ग की इच्छा करने वाले ब्राह्मण जिस लोक में जिस प्रकार जाते हैं उसी लोक में क्षणमात्र में ही वे शूरवीर जाते हैं जो युद्ध में प्राणों को त्यागते हैं ॥ ४५ ॥ जब युद्ध में जय होने से लक्ष्मी और मरने से स्वर्ग मिलता है तो क्षणमोक्ष में नष्ट होने वाली कायाके रणमें मरनेकी क्या चिन्ता है? ॥ ४६ ॥ संग्राम में मस्तक से गिरता हुआ रुधिर जिस के मुख में प्रवेश करता है वह मुख संग्राम रूपी यज्ञ में विधिपूर्वक सोमपान करने वाले मुख के तुल्य है ॥ ४७ ॥ जो द्विजाति लोग मरे हुए अनाथ ब्राह्मण को श्मशान में ले जाते हैं वे क्रम से पग २ में यज्ञ के फल को प्राप्त होते हैं ॥ ४८ ॥ और उन द्विजों को शुभ कर्म करने में कुछ भी अशुभ वा दोष नहीं है क्योंकि जल में स्नान करने से उन की उसी समय शुद्धि हो

असगीत्रमवन्धुं च प्रेतीभूतं द्विजोत्तमम् ।  
 स्नात्वा च दाहयित्वा च प्राणायामेन शुद्ध्यति ॥ ५० ॥  
 अनुगम्येच्छया प्रेतं ज्ञातिमज्ञातिमेव वा ।  
 स्नात्वा सचैलं स्पृष्ट्वाग्निं घृतं प्राश्य विशुद्ध्यति ॥ ५१ ॥  
 क्षत्रियं मृतमज्ञानाद् ब्राह्मणोऽनुगच्छति ।  
 एकाहमशुचिर्भूत्वा पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥ ५२ ॥  
 शवंच वैश्यमज्ञानाद् ब्राह्मणोऽनुगच्छति ।  
 कृत्वा शौचं द्विरात्रं च प्राणायामान्पडाचरेत् ॥ ५३ ॥  
 प्रेतीभूतं तु यः शूद्रं ब्राह्मणो ज्ञानदुर्वलः ।  
 अनुगच्छेत्क्षीयमानं त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ ५४ ॥  
 त्रिरात्रे तु ततः पूर्णं नदीं गत्वा समुद्रगाम् ।  
 प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य विशुद्ध्यति ॥ ५५ ॥  
 विनिवर्त्य यदा शूद्रा उदकान्तमुपस्थिताः ।  
 द्विजैस्तदानुगन्तव्या एषधर्मः सनातनः ॥ ५६ ॥

जाती है ॥ ४६ ॥ जो ब्राह्मण अपने गोत्र का न हो और अपना वन्धु भी न हो वह मरजाय तो श्मशान में ले जा कर और दाह करके प्राणायाम करने से शुद्ध हो जाता है ॥ ५० ॥ अपने वर्ण के वा अन्य वर्ण के मुर्दा के संग जाकर वहाँ सहित स्नान, अग्नि का स्पर्श और थोड़ा घी खाकर शुद्ध हो जाता है ॥ ५१ ॥ मरे हुए क्षत्रिय के संग जो ब्राह्मण अज्ञान से श्मशान में जाता है वह एक दिन अशुद्ध रह कर पञ्चगव्य सेवन करने से शुद्ध होता है ॥ ५२ ॥ जो ब्राह्मण मरे हुए वैश्य के संग अज्ञान से जावे वह दो दिन रात का अशौच करके छः प्राणायाम करे ॥ ५३ ॥ जो अज्ञानी ब्राह्मण मरे हुए शूद्र के संग श्मशान में जाता है वह तीन दिन रात अशुद्ध होता है ॥ ५४ ॥ तीन दिन के पीछे जो समुद्र में जाने वाली हो उस गंगादि नदी में जाके स्नान करे तब सौ प्राणायाम कर और घी खाके शुद्ध होता है ॥ ५५ ॥ जब श्मशान से लौटकर शूद्र लोग जल के समीप तिलाञ्जलि देने की आर्चे तब द्विज लोग उन के समीप जाय यही सनातन धर्म की रीति है ॥ ५६ ॥ तिस से द्विज लोग मरे हुए शूद्र का न तो

तस्माद्द्विजोमृतशूद्रं नरपृथोन्नचदाहयेत् ।

दृष्टेसूर्यावलोकनेन शुद्धिरेषापुरातनी ॥ ५७ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥

अतिमानादतिक्रोधात्स्नेहाद्वायदिवामयात् ।

उद्ध्वनीयात्स्त्रीपुमान्वा गतिरेषाविधीयते ॥ १ ॥

पूयशोणितसंपूर्णे त्वन्धेतमसिमज्जति ।

षष्टिवर्षसहस्राणि नरकं प्रतिपद्यते ॥ २ ॥

नाशौचं नोदकं नाग्निं नाश्रुपातं च कारयेत् ।

बोढारोऽग्निप्रदातारः पाशच्छेदकरास्तथा ॥ ३ ॥

तप्तकृच्छ्रेण शुद्ध्यन्तीत्येवमाह प्रजापतिः ।

गोभिर्हतं तथोद्धुं ब्राह्मणेन तु घातितम् ॥ ४ ॥

संस्पृशन्ति तु ये विप्रा बोढारश्चाग्निदाश्रये ।

अन्येऽपि वाऽनुगन्तारः पाशच्छेदकराश्च ये ॥ ५ ॥

स्पर्श करें और न दाह करावें यदि मरे शूद्र को देख लें तो सूर्यनारायण के दर्शन से शुद्धि होती है यह शुद्धि पुरातन धर्म की मर्यादा है ॥ ५७ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र का तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥

अत्यन्त मान से वा अत्यन्त क्रोध से वा किसी के साथ अधिक प्रेम होने से वा भय से स्त्री अथवा पुरुष परस्पर फांसी दें, जो उन की निम्न लिखित गति होती है ॥ १ ॥ पीव और रुधिर से भरे अन्धतामिश्र नरक में साठ हजार वर्ष तक गोता खाते हैं ॥ २ ॥ न उन का अशौच, न जलदान, न अग्निदाह, और न आंसू बहाते हुये उन के लिये कोई रोवे जो उन्हें गंगा आदि में ले जाय वा जो अग्नि में दाह करे और जो उन की फांसी को काटे ॥ ३ ॥ वे लोग तप्त कृच्छ्र मृत करने से शुद्ध होते हैं ऐसा प्रजापति ने कहा है—जो पुरुष गौओं से मारा गया हो वा घन्घन (फांसी) से मरा हो वा जिस को ब्राह्मण ने मारा हो ॥ ४ ॥ उसका जो ब्राह्मण स्पर्श करें वा उसके मृत देह को श्मशान में लेजाय वा जो अग्नि में दाह करे और जो उस के संग जाय

तप्तकृच्छ्रेण शुद्धास्ते कुर्युर्ब्राह्मणभोजनम् ।  
 अनहुत्सहितांगां च दद्युर्विप्राय दक्षिणाम् ॥ ६ ॥  
 इयहमुष्णं पिबेद्वारि इयहमुष्णं पयः पिबेत् ।  
 इयहमुष्णं पिबेत् सर्पिर्वायुमक्षो दिनत्रयम् ॥ ७ ॥  
 षट् पलं तु पिबेदम्भस्त्रिपलन्तु पयः पिबेत् ।  
 पलमेकं पिबेत् सर्पिस्तप्तकृच्छ्रं विधीयते ॥ ८ ॥  
 यो वै समाचरेद्विप्रः पतितादिष्वकामतः ।  
 पञ्चाहं वा दशाहं वा द्वादशाहमथापि वा ॥ ९ ॥  
 मासार्द्धमासमेकं वा मासद्वयमथापि वा ।  
 अष्टार्द्धमासमेकं वा भवेदूर्ध्वहितत्समः ॥ १० ॥  
 त्रिरात्रं प्रथमे पक्षे द्वितीये कृच्छ्रमाचरेत् ।  
 तृतीये चैव पक्षे तु कृच्छ्रं सान्तपनं चरेत् ॥ ११ ॥  
 चतुर्थे दशरात्रं स्यात्पराकः पञ्चमे मतः ।  
 कुर्याच्चान्द्रायणं षष्ठे सप्तमे त्वेन्दवद्वयम् ॥ १२ ॥

वा जो फांसी काटे ॥ ५ ॥ वे तप्त कृच्छ्र व्रत से शुद्ध हुए ब्राह्मणों को भोजन करावें और एक बैल और एक गौ ब्राह्मण को दक्षिणा दें ॥ ६ ॥ तीन दिन गर्म जल पीवे फिर तीन दिन गर्म दूध पीवे फिर तीन दिन गर्म घी पीवे फिर तीन दिन वायु को भक्षण करके रहे ॥ ७ ॥ छः पल जल, तीन पल दूध, एक पल घी, इस को तप्त कृच्छ्र कहते हैं (पांच तोला चार मासे का एक पल होता है) ॥ ८ ॥ जो ब्राह्मण पतित आदिकों के साथ अज्ञान से पांच, दश, वा बारह दिन व्यवहार करता है ॥ ९ ॥ पन्द्रह दिन, वा एक महीना, वा दो महीने, वा छः महीने, वा एक वर्ष तक पतित के साथ व्यवहार करे वह उस प्रायश्चित्त को करे जो आगे कहेंगे और एक वर्ष से अधिक व्यवहार करे तो वह भी उसी पतित के तुल्य (पतित) हो जाता है ॥ १० ॥ पांच दिन पतित का संग करने में तीन दिन उपवास, दस दिन करने में एक कृच्छ्र, चारह दिन के संग में सान्तपन कृच्छ्र करे ॥ ११ ॥ पन्द्रह दिन के संग में दश दिन का व्रत एक महीने के संग में पराक कृच्छ्र व्रत, दो महीने के संग में चान्द्रायण और छः महीने के संग में दो चान्द्रायण व्रत करे ॥ १२ ॥

शुद्ध्यर्थमष्टमेचैव षण्मासान्कृच्छ्रमाचरेत् ।  
 पक्षसंख्याप्रमाणेन सुवर्णान्यपिदक्षिणा ॥ १३ ॥  
 ऋतुस्नातातुयानारी भर्तारनोपसर्पति ।  
 सामृतानरकंयाति विधवाचपुनःपुनः ॥ १४ ॥  
 ऋतुस्नातांतुयोभार्यां सन्निधौनोपगच्छति ।  
 घोरायांभूणहत्यायां युज्यतेनात्रसंशयः ॥ १५ ॥  
 अदुष्टाऽपतितांभार्यां यौवनेयःपरित्यजेत् ।  
 सप्तजन्मभवेत्स्त्रीत्वं वैधव्यञ्चपुनःपुनः ॥ १६ ॥  
 दरिद्रं व्याधितंमूर्खं भर्तारयावमन्यते ।  
 सामृताजायतेव्याली वैधव्यंचपुनःपुनः ॥ १७ ॥  
 पत्यौजीवतियानारी उपोष्यव्रतमाचरेत् ।  
 आयुष्यंहरतेभर्तुः सानारीनरकंव्रजेत् ॥ १८ ॥  
 अपृष्ठाचैवभर्तारं यानारीकुरुतेव्रतम् ।  
 सर्वतद्राक्षसान्गच्छेदित्येवंमनुरब्रवीत् ॥ १९ ॥

एक वर्ष के संग में छः महीने तक कृच्छ्रव्रत करे और प्रत्येक पक्ष की संख्या के प्रमाण से सुवर्ण दान की संख्याओं का प्रमाण जाने । अर्थात् एक महीने के संग का प्रायश्चित्त हो तो दो सुवर्ण दक्षिणा देवे ( सोलह मासा सोने को "सुवर्ण" कहते हैं ) ॥ १३ ॥ जो स्त्री ऋतु कालमें चौधे दिन स्नान करके छठे आदि दिन पति के समीप नहीं जाती वह मर कर नरक में जाती है और बार-बार विधवा होती है ॥ १४ ॥ जो पुरुष ऋतु में स्नान जिसने किया हो उस अपनी पत्नी के समीप नहीं जाता उसे घोर भूण हत्या लगती है ॥ १५ ॥ जो पतित न हुई हो ऐसी निर्दोष पत्नी को युवावस्था में जो पुरुष छोड़ देता है वह सात जन्म तक स्त्री योनि में जन्म लेता और बार २ विधवा होता है ॥ १६ ॥ दरिद्री, रोगी मूर्ख भी जो अपना पति हो उस का जो स्त्री अपमान करती है वह मर कर सांपिन होती और बार-बार विधवा होती है ॥ १७ ॥ पति के जीवते जो स्त्री पति सेवा न करके उसकी आज्ञा से विरुद्ध उपवास तथा व्रत करती है वह अपने पति की अवस्था घटाती और आप नरक में जाती है ॥ १८ ॥ जो स्त्री अपने पति को पूछे बिना व्रत करती है वह सब राक्षसों को

बान्धवानांसजातीनां दुर्वृत्तंकुरुतेतुया ।

गर्भपातंचयाकुर्यान्न तांसंभाषयेत्क्वचित् ॥ २० ॥

यत्पापं ब्रह्महत्याया द्विगुणं गर्भपातने ।

प्रायश्चित्तं तस्यास्ति तस्यास्त्यागो विधीयते ॥ २१ ॥

न कार्यमावसथ्येन नाग्निहोत्रेण वा पुनः ।

स भवेत्कर्म चाण्डालो यस्तु धर्मपराङ्मुखः ॥ २२ ॥

ओषवाताहतं बीजं यस्य क्षेत्रे प्ररोहति ।

स क्षेत्रीलभते बीजं न बीजीभागमर्हति ॥ २३ ॥

तद्वत्परस्त्रियः पुत्री द्वी सुतौ कुण्डगोलकौ ।

पत्यौ बीजवतिकुण्डस्तु मृते भर्तारि गोलकः ॥ २४ ॥

औरसः क्षेत्रजश्चैव दत्तः कृत्रिमकः सुतः ।

दद्यान्मातापितावापि स पुत्रो दत्तको भवेत् ॥ २५ ॥

मिलता है यह मनुजी ने कहा है ॥ १९ ॥ जो स्त्री अपने सजातीय बांधवों के संग दुष्ट  
भाचरण और गर्भपात करती है उसके संग कभी भी पति मापण न करे ॥ २० ॥ जो  
पाप ब्रह्महत्या का है उस से दूना गर्भ के पात ( गिराने ) में है, उस गर्भ वातिनी का  
प्रायश्चित्त कुछ नहीं है, किन्तु उसका त्याग कर देवे ॥ २१ ॥ उस गर्भपात करने  
वाली पत्नी के त्याग से श्वेत स्मार्त्त अग्निहोत्र भले ही छूट जाय कुछ चिन्ता न करे  
किन्तु उस स्त्री के साथ अग्निहोत्र करने वाला धर्म विरोधी होने से कर्मचाण्डाल  
माना जायगा ॥ २२ ॥ आंधी रूप वायु के वेग से उड़कर आया बीज यदि दूसरे के  
क्षेत्र में उपज आवे तो वह क्षेत्र वाले का ही भाग होगा और बीज वाले को उस का  
भाग मिलना योग्य नहीं ॥ २३ ॥ इसी प्रकार अन्यपुरुष के बीज से दूसरे की स्त्री में  
जो पुत्र उत्पन्न हो वह भी उस का होगा जिस की वह स्त्री हो सो ऐसे  
कुण्ड और गोलक दो पुत्र होते हैं जो पति के जीते जी जार से उत्पन्न  
हो वह कुण्ड और पति के मरे पीछे होय तो गोलक कहाता है ॥ २४ ॥ औरस,  
क्षेत्रज, दत्तक, और कृत्रिम ये चार पुत्र कहाते हैं । जिस को माता वा पिता है  
देवे वह उसका दत्तक पुत्र होता है ॥ २५ ॥ परिवृत्ति ( परिवेष्टा का बड़ा भार )

परिवित्तिःपरीवेत्ता ययाचपरिविद्यते ।  
 सर्वेतेनरकंयान्ति दातृयाजकपञ्चमाः ॥ २६ ॥  
 दाराग्निहोत्रसंयोगं कुस्तेयोऽग्रजेसति ।  
 परिवेत्तासविज्ञेयः परिवित्तिस्तुपूर्वजः ॥ २७ ॥  
 द्वौकृच्छ्रौपरिवित्तिस्तु कन्यायाःकृच्छ्रएवच ।  
 कृच्छ्रातिकृच्छ्रौदातुस्तु होताचान्द्रायणं चरेत् ॥२८॥  
 कुब्जवामनषण्ठेषु गद्गदेषुजङ्घेषुच ।  
 जात्यन्धेबधिरमूके नदोषःपरिविन्दतः ॥ २९ ॥  
 पितृव्यपुत्रःसापत्नः परनारीसुतस्तथो ।  
 दाराग्निहोत्रसंयोगे नदोषःपरिवेदने ॥ ३० ॥  
 ज्येष्ठोभ्रातायदातिष्ठेदाधाननैवकारयेत् ।  
 अनुज्ञातस्तुकुर्वीत शंखस्यवचनंयथा ॥ ३१ ॥  
 नष्टेमृतेप्रव्रजिते क्लीबेचपतितेपतौ ।  
 पञ्चस्वाप्तसुनारीणां पतिरन्योव्विधीयते ॥ ३२ ॥

परिवेत्ता ( वड़े भाई से पहिले जो छोटा विवाह करै ) वह कन्या जिस के साथ विवाह करने से वह परिवेत्ता हुआ है, कन्या का दाता और याजक ( विवाह पढ़ने वाला ) ये सब नरक में जाते हैं ॥ २६ ॥ ज्येष्ठ भाई से पहिले जो अपना विवाह करे वा ज्येष्ठ की आज्ञा के बिना अग्निहोत्र ग्रहण करे वह परिवेत्ता और ज्येष्ठ भाई परिवित्ति कहाता है ॥ २७ ॥ परिवित्ति दो कृच्छ्र व्रत करे, कन्या एक कृच्छ्र व्रत करे, कन्याका दाता कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र दोनों व्रत करेतथा विवाह कराने वाला पुरोहित चांद्रायण व्रत करै ॥ २८ ॥ कुबड़ा, बिलंदिया ( बीना ) नपुंसक, तोतला, महामूर्ख, जन्मान्ध, बहरा, भूंगा, इन ऐसे जेठे भाइयों के, परिवेदन करने ( पहिले विवाह वा अग्निहोत्र लेने ) में दोष नहीं है ॥२९॥ यदि जेठा भाई चाचा का पुत्र हो, वा सौतेली माता का पुत्र हो, वा दूसरे की स्त्री का पुत्र हो तों उस से पहिले विवाह करने और अग्निहोत्र लेने से उसके परिवेदन में दोष नहीं है ॥३०॥ जेठा भाई विद्यमान हो पर स्वयं अग्निहोत्र न ले तब शंख ऋषि के वचनानुसार उस वड़े भाई की आज्ञा से छोटा भाई अग्निहोत्र को ग्रहण करले ॥ ३१ ॥ जिस से सगाई हुई हो वह पति नष्ट (परदेश में गया हो और खबर न हो ) हो जाय, वा मर जाय, वा संन्यासी हो जाय, वा

मृतेभर्त्तरियानारी ब्रह्मचर्यव्रतेस्थिता ।  
 सामृतालभतेस्वर्गं यथातेब्रह्मचारिणः ॥ ३३ ॥  
 तिस्रःकोट्योर्दुःकोटीच यानिलोमानिमानवे ।  
 तावत्कालं वसेत्स्वर्गे भर्त्तारं याऽनुगच्छति ॥ ३४ ॥  
 व्यालग्राहो यथा व्यालं बलादुद्धरते विलात् ।  
 एवं स्त्री पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते ॥ ३५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

वृकश्चानशृगालादि दण्डो यस्तु द्विजोत्तमः ।  
 स्नात्वा जपेत्सगायत्रीं पवित्रां विदमातरम् ॥ १ ॥  
 गवांशृङ्गोदकस्नानान् महानद्योस्तु सङ्गमे ।  
 समुद्रदर्शनाद्वापि शुनादष्टः शुचिर्भवेत् ॥ २ ॥

नपुंसक निकले, वा पतित हो जाय, तो इन पांच आपत्तियों में ही दूसरा पति कहा है अर्थात् सगाई हुए पीछे दूसरे के संग सगाई करके विवाह कर देवे अर्थात् अन्य कुरूप वरिष्ठ सूर्यत्वादि दोष श्रात होने पर भी कानून उसी के साथ विवाह होना चाहिये ॥ ३२ ॥ पति के मरे पीछे जो स्त्री ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहती है। वह मर कर स्वर्ग में इस प्रकार जाती है जैसे वे ब्रह्मचारी गये जिनने विवाह न करके ऊर्ध्व रैता रहते हुए तप करते २ शरीर छोड़ा ॥ ३३ ॥ जो स्त्री पति के संग अनुगमन (सती होना) करती है वह साढ़े तीन करोड़ मनुष्य के शरीर में जो लोम है उसने ही वर्ष तक स्वर्ग में बसती है ॥ ३४ ॥ सांप को पकड़ने वाला जैसे विल में से सांप को बलात्कार से निकाल लेता है ऐसे ही वह स्त्री भी नरक से अपने पतिका [यदि पति कुकर्म होने से नरक भागी हो तो] उद्धार करके उस पतिके संग ही स्वर्ग में सानन्द भोगती है ॥ ३५ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ४ चौथा अध्याय पूरा हुआ ।

भेड़िया, कुत्ता, गीदड़, आदि जिस ज्ञात को काटे वह स्नान करके वेदों की माता पवित्र गायत्री का जप करे ॥ १ ॥ कुत्ता जिसे काटे वह गौ के सींग के जल द्वारा स्नान से वा गङ्गादि महानदियों के सङ्गम में स्नान करने

वेदविद्याव्रतस्नातः शुनादष्टोद्विजोयति ।  
 सहिरण्योदकेस्नात्वा घृतं प्राश्य विशुद्ध्यति ॥ ३ ॥  
 सव्रतस्तु शुनादष्टस्त्रिरात्रं समुपोषितः ।  
 घृतं कुशोदकं पीत्वा व्रतशेषं समापयेत् ॥ ४ ॥  
 अव्रतः सव्रतो वापि शुनादष्टो भवेद्द्विजः ।  
 प्रणिपत्य भवेत्पूतो विप्रैश्चक्षुर्निरीक्षितः ॥ ५ ॥  
 शुनाघ्राताऽवलीढस्य नखैर्विलिखितस्य च ।  
 अङ्घ्रिः प्रक्षालनं प्रोक्तमग्निनाचोपचूलनम् ॥ ६ ॥  
 ब्राह्मणी तु शुनादष्टा जम्बुकेन वृकेण वा ।  
 उदितं सोमनक्षत्रं दृष्ट्वा सद्यः शुचिर्भवेत् ॥ ७ ॥  
 कृष्णपक्षे यदा सोमो न दृश्येत कदाचन ।  
 यांदिशं व्रजते सोमस्तांदिशं चाऽवलोकयेत् ॥ ८ ॥  
 असद्ब्राह्मणके ग्रामे शुनादष्टोद्विजोत्तमः ।  
 वृषं प्रदक्षिणीकृत्य सद्यः स्नात्वा शुचिर्भवेत् ॥ ९ ॥

ये वा समुद्र के दर्शन से शुद्ध होता है ॥२॥ वेद विद्या पढ़ के वा ब्रह्मचर्य व्रत पूरा कर के समावर्त्तन स्नान किये गृहस्थ ब्राह्मण को यदि कुत्ता काटे तो वह लुचर्ण सहित जल से स्नान कर और गोघृत खाके शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ यदि व्रत-वाले ब्राह्मण को कुत्ता काटे तो तीन दिन रात उपवास करे फिर घृत और कुशों के जल को पीकर शेष व्रत को पूरा कर देवे ॥ ४ ॥ व्रत वाले वा बिना व्रत-वाले-कैसे ही ब्राह्मण को कुत्ता काटे तो ब्राह्मणों को प्रणिपात (नमस्कार) करने और तपस्वी ब्राह्मणों के देखने से शुद्ध होता है ॥-५ ॥ जो वस्तु कुत्ते ने सूँघा वा चाँटा हो, वा नखों से खोंदा हो वह जल से धोने और अग्नि में तपाने से शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ यदि ब्राह्मणी को कुत्ता वा गीदड़ वा भेड़िया काटे तो उदय हुए चन्द्रमा और नक्षत्रों को देख कर शुद्ध होती है ॥ ७ ॥ यदि कृष्णपक्ष में कभी चन्द्रमा न दीखे तो जिस दिशा को चन्द्रमा उदय हो कर जाता है उस दिशा को देख लेवे ॥८॥ जिस में अन्य कोई ब्राह्मण न हों वा ब्रह्मतेज से हीन दुराचारी ब्राह्मण रहते हों ऐसे ग्राम में यदि ब्राह्मण को कुत्ता काटे

चण्डालेनश्चपाकेन गोभिर्विप्रैर्हतोयदि ।  
 आहिताग्निमृतोविप्रो विषेणात्माहतोयदि ॥ १० ॥  
 दहेत्तं ब्राह्मणंविप्रो लोकाग्नीमन्त्रवर्जितम् ।  
 स्पृष्ट्वाचीह्यश्चदग्ध्वाच सपिण्डेषुचसर्वदा ॥ ११ ॥  
 प्राजापत्यंचरेत्पश्चाद्विप्राणामनुशासनात् ।  
 दग्ध्वास्योनिपुनर्गृह्य क्षीरैःप्रक्षालयेद्द्विजः ॥ १२ ॥  
 स्वेनाऽग्निनास्वमन्त्रेण पृथगेतत्पुनर्दहेत् ।  
 आहिताग्निद्विजः कश्चित्प्रवसेत्कालचोदितः ॥ १३ ॥  
 देहनाशमनुप्राप्तस्तस्याऽग्निर्वसतेगृहे ।  
 श्रौतोऽग्निहोत्रसंस्कारः श्रूयतांमुनिपुङ्गवाः ! ॥ १४ ॥  
 कृष्णार्जिनंसमास्तूर्यं कुशैस्तुपुरुषाकृतिम् ।  
 षट्शतानिशतञ्चैव पलाशानाञ्चवृन्तकम् ॥ १५ ॥  
 श्वत्वारिंशच्छिरेदद्यात्पष्टिकण्ठेतुविन्यसेत् ।  
 बाहुभ्यांचशतंदद्यादङ्गुलीषुदशैवतु ॥ १६ ॥

तो शिव जी के बाहन बैल ( नन्दी ) की प्रदक्षिणा कर शीघ्र स्नान करके शुद्ध होता है ॥ १० ॥ यदि किसी ब्राह्मण को चाण्डाल, श्वपाक ( महतर की जाति डोम ) गौ, वा ब्राह्मण मार डाले वा विष खाकर स्वयं मर जाय और वह आहिताग्नि नाम अग्निहोत्री होय तो ॥ १० ॥ उस ब्राह्मणका लौकिक अग्निसे ब्राह्मण मन्त्र वर्जित दाह करे । और यदि सपिण्ड के लोग उस का स्पर्श करें, श्मशान में ले जाय वा दाह करें तो क्रिया करने पश्चात् सदैव ॥ ११ ॥ ब्राह्मणों की आत्मा से प्राजापत्य व्रत करें और उस के फूँके हुये हाड़ों को फिर बीन कर द्विज लोग दूध से धोवें ॥ १२ ॥ फिर अपने अग्नि और अपनी शाखा के मन्त्र से दूसरी जगह विधि पूर्वक उस चाण्डालादि के हाथ से मरे ब्राह्मण के हड्डियों का दाह करें । यदि अग्निहोत्री ब्राह्मण परदेश में गया काल वश ॥ १३ ॥ मरण को प्राप्त हो जाय और अग्नि उस के घर में विद्यमान होय तो हे मुनियो में श्रेष्ठ लोगो! उस प्रेत का वेदोक्त अन्त्येष्टि संस्कार तुम खुनो ॥ १४ ॥ कालीमृगछाला बिछाकर कुशाओं से पुरुष का आकार बनावे सातसौ ७०० ढाँक के पत्ते डंडी सहित इस निम्न लिखित प्रकारसे उसमें ढगावे ॥ १५ ॥ चालीस शिरमें, साठ पत्ते कण्ठमें, दोनों भुजाओं

शतंचोरसिसंदद्याच्छतंचैवोदरेन्यसेत् ।  
 दद्यादष्टौवृषणयोः पञ्चमेदूरेतुविन्यसेत् ॥ १७ ॥  
 एकविंशतिमूरुभ्यां जानुजङ्घेचविंशतिम् ।  
 पादाङ्गुल्योःशताहुंच यज्ञपात्रंततोन्यसेत् ॥ १८ ॥  
 शस्यांशिरनेविनिक्षिप्य अरणिंमुष्कयोरपि ।  
 जूहूज्वदक्षिणेहस्ते वामेतूपभृतंन्यसेत् ॥ १९ ॥  
 कर्णतूलूखलंदद्यात्पृष्ठेचमुसलंन्यसेत् ।  
 उरसिक्षिप्यदृषदं तण्डुलाज्यतिलान्मुखे ॥ २० ॥  
 श्रोत्रेचप्रोक्षणींदद्यादाज्यस्थालींचचक्षुषोः ।  
 कर्णेनेत्रमुखेव्राणे हिरण्यशकलंन्यसेत् ॥ २१ ॥  
 अग्निहोत्रोपकरणमशेषंतत्रविन्यसेत् ।  
 असौस्वर्गायलोकाय स्वाहेतिचघृताहुतिम् ॥ २२ ॥  
 दद्यात्पुत्रोऽथवाभ्राताप्यन्योवापिचयान्धवः ।

में सौ २ पत्ते और दशर ( पचास ) पत्ते हाथों तथा अंगुलियों में लगावे ॥ १६ ॥  
 सौ पत्ते छाती में, सौ पत्ते उदर में और आठ पत्ते दोनों वृषणों ( अण्डकोशों )  
 में, और पांच मेढू ( लिङ्ग ) में, रखे ॥ १७ ॥ इक्कीस २ पत्ते घोंटू से ऊपर  
 दोनों जाघों में, घोंटू से नीचे गोड़ों में बीस २ पत्ते, और पगों तथा पादों  
 की अङ्गुलियों में पचास पत्ते रखे । फिर यज्ञ के पात्रों का विनियोग  
 निम्न लिखित रीति से करे ॥ १८ ॥ शस्या नामक यज्ञ पात्र को लिंग पर,  
 अरणी को अण्डकोशों पर, दहिने हाथ पर जुहू को, बायें हाथ में उपभृत् को रखे  
 ॥ १९ ॥ दहिने कान पर ऊखल को, पीठ पर मूसल को रखे, छाती पर दृषद ( हवि-  
 र्पुपीपने की शिल ) तंडुल, घी, और तिल मुख पर रखे ॥ २० ॥ कान पर प्रोक्षणी  
 पात्र, नेत्रों में आज्य स्थाली को रखे, कान, नेत्र, मुख, नाक, इन के छिद्रों में सुवर्ण  
 के टुकड़े डाले ॥ २१ ॥ और अग्निहोत्र के शेष बचे सब औजार वहां चितापर रखदे  
 फिर प्रज्वलितामि में ( असौस्वर्गाय लोकाय स्वाहा ) इस मंत्र से घृतकी एक आहुति

यथादहनसंस्कारस्तथाकार्यविचक्षणैः ॥ २३ ॥

ईदृशंतुविधिंकुर्याद् ब्रह्मलोकगतिःस्मृता ।

दहन्तिषेद्विजास्तंतु तेयान्तिपरमांगतिम् ॥ २४ ॥

। अन्यथाकुर्वतेकर्म त्वात्मबुद्धिप्रचोदिताः ।

भवन्त्यल्पायुस्तैव पतन्तिनरकेऽशुचौ ॥ २५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि प्राणिहत्यासुनिष्कृतिम् ।

पराशरेणपूर्वाक्तां मन्वर्थेपिचविस्तृताम् ॥ १ ॥

क्रौञ्चसारसहंसांश्च चक्रवाकंचकुक्कुटम् ।

जालपादंचशरभं हत्वाऽहोरात्रतःशुचिः ॥ २ ॥

बलाकाटिहिभीवापि शुकपारावतावपि ।

अटीनवकघातीच शुद्ध्यतेनक्तभोजनात् ॥ ३ ॥

चिता पर छोड़े ॥ २२ ॥ पुत्र, भारी, अथवा अन्य कोई बांधव इस आहुति को देवे । फिर जैसे अग्नि से दाह करते हैं वैसे ही विद्वान् लोग सब कर्म करें ॥ २३ ॥ जिस मृतक का ऐसे पूर्वोक्त विधान से दाह कर्म किया जाय उस को ब्रह्मलोक प्राप्त होता है और जो ब्राह्मणादि द्विज उस अग्निहोत्री का दाह करते हैं वे भी परमगति को प्राप्त होते हैं ॥ २४ ॥ जो लोग अपनी बुद्धि से अन्यथा शास्त्र विरुद्ध कर्म करते हैं वे अव्य अवस्था वाले होते हैं और अशुद्ध नरक में पड़ते हैं ॥ २५ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूरा हुआ ॥

यहां से प्राणियों की हत्याओं का प्रायश्चित्त कहते हैं । जो प्रथम महर्षि पाराशर ने कहा और जिसे मनुजी ने भी विस्तार से कहा है ॥ १ ॥ क्रौंच, सारस, हंस, चक्रवा, मुरगा, जालपाद [ सीलह ] शरभ ( एक प्रकारका मृग ) इनको मारकर एक दिवस त व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २ ॥ बलाका, टिड्ढिभ, तोता, कबूतर, अटीन चक्रे ( जो बगला उड़ता फिरे ) इन के मारने पर दिन भर व्रत कर रात्रि को भोजन करने से शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ मेंड़िया, कौआ, कपोत, सारी ( पक्षिसेद ) और

वृंकाककपोतानां सारीतित्तिरिघातकः ।  
 अन्तर्जलउभेसंध्ये प्राणायामेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥  
 गृध्रयेनशशादीनामुलूकस्यचघातकः ।  
 अपक्वाशीदिनंतिष्ठे-त्त्रिकालंमारुताशनः ॥ ५ ॥  
 वल्गुलीचटकानां च कोकिलाखज्जरीटकान् ।  
 लां वकान् रक्तपादांश्च शुद्ध्यतेनक्तभोजनात् ॥ ६ ॥  
 कारण्डवचकोराणां पिङ्गलाकुररस्य च ।  
 भारद्वाजादिकंहत्वा शिवसंपूज्यशुद्ध्यति ॥ ७ ॥  
 भेरुण्डचापभासांश्च पारावतकपिञ्जली ।  
 पक्षिणांचैवसर्वेषामहोरात्रभोजनम् ॥ ८ ॥  
 हत्वामूपकमार्जारसर्पाजगरदुण्डुमान् ।  
 कृसरंभोजयेद्विप्रान् लोहदण्डचदक्षिणाम् ॥ ९ ॥  
 शिशुमारंतथागोधां हत्वाकूर्मञ्चशल्लकम् ।  
 वृन्ताकफलभक्षीवाऽप्यहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ १० ॥

तोतर इन को जो मारे वह दोनों संध्याओं ( प्रातःकाल और सायंकाल ) में जल के भीतर प्राणायाम करने से शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ गीघ, वाज, खरहा, और उल्लू इनको जो मारे वह दिनभर पकाया अन्न न खावे किन्तु तीनों काल वायु भक्षण करता हुआ खड़ा रहे ॥ ५ ॥ वल्गुली, चटका, कोइल, खंजरीट, ( खंजन ) लावक ( लवां ) रक्त पग वाले इन पक्षियों को मार कर दिन को जपादिघृत तथा रात को भोजन करने से शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ कारंडव ( हंस का भेद ) चकोर, पिंगला, ( छोटा उल्लू ) कुरर ( कुररी ) भारद्वाज ( व्याघ्राट ) आदि को मार कर शिव जी का पूजन करने से शुद्ध होता है ॥ ७ ॥ भेरुण्ड ( भुरड ) परीहा, भासे, पारावत, कपिंजल, और अन्य सब पक्षियों को मार कर एक दिन रात भोजन न करे ॥ ८ ॥ मूस, विलाव, सांप, अजगर और दुण्डुम, को मारने वाला ब्राह्मणों को क्लिचड़ी जिमाकर लोहे का डंडा दक्षिण में देवे ॥ ९ ॥ शिशुमार, गोह, कलुभा, सेही, इनको जो मारे वह और जो बैंगन खाय वह एक दिन रात व्रत उपवास करने से शुद्ध होता है ॥ १० ॥ भेड़िया

वृकजम्बुकऋक्षाणां तरक्षूणांचघातकः ।

तिलप्रस्थं द्विजैश्च दद्याद्युभक्षो दिनत्रयम् ॥ ११ ॥

गजस्य चतुरङ्गस्य महिषोष्ट्रनिपातने ।

प्रायश्चित्तमहोरात्रं त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ १२ ॥

कुरङ्गवानरसिंहं चित्रंव्याघ्रञ्च घातयन् ।

शुद्ध्यते स त्रिरात्रेण विप्राणां तर्पणेन च ॥ १३ ॥

मृगरोहिद्वराहाणामवेर्वस्तस्य घातकः ।

अफालकृष्टमश्नीयादहोरात्रमुपोष्य सः ॥ १४ ॥

एवं च तुष्पदानां च सर्वेषां वनचारिणाम् ।

अहोरात्रोषितस्तिष्ठेज्जपन्वैजातवेदसम् ॥ १५ ॥

शिल्पिनं कारुकं शूद्रं स्त्रियं वा यस्तु घातयेत् ।

प्राजापत्यद्वयं कृत्वा वृषैकादशदक्षिणा ॥ १६ ॥

वैश्यं वा क्षत्रियं वापि निर्दोषं योऽभिघातयेत् ।

सोऽतिकृच्छ्रद्वयं कुर्याद् गोविंशं दक्षिणां ददेत् ॥ १७ ॥

गौदड़, रीछ, तरक्षु ( चीता ) इन को जो मारे वह ब्राह्मण को एक सेर भर तिल देवे और तीन दिन वायु मात्र का मक्षण करे अर्थात् उपवास करे ॥ ११ ॥ हाथी, घोड़ा, भैंसा, ऊँट, इन को जो मारे वह एक दिन रात उपवास करे और त्रिकाल स्नान करे ॥ १२ ॥ कुरंग मृग, वानर, सिंह, चीता, बाघ, इनको जो मारे वह तीन दिन रात व्रत करने और ब्राह्मणों को भोजन कराने से शुद्ध होता है ॥ १३ ॥ हरिण, लालमृग, सूकर, भेड़ वकरा, इन को जो मारे वह एक दिन रात उपवास करके उस अन्न को खाये जो बिना जोते पैदा हुआ हो ॥ १४ ॥ इसी प्रकार सब चौपाये और सब वनके विचरने वाले जीवों को मार कर जातवेदस अग्नि के मंत्र का जप करता हुआ एक दिन रात खड़ा रह के उपवास करे ॥ १५ ॥ शिल्पी [चित्रकार] कारीगर, शूद्र, और स्त्री इन को जो मार डाले वह बारह २ दिन के दो प्राजापत्य व्रत करके दश गौ ११ वीं बेल दक्षिणा में देवे ॥ १६ ॥ निर्दोष वैश्य वा क्षत्रिय को जो मार डाले वह दो अति-कृच्छ्र व्रत करे और बीस गौ दक्षिणा में देवे ॥ १७ ॥ शुभ कर्म में तत्पर वैश्य वा शूद्र

वैश्यंशूद्रंक्रियासक्तं विकर्मस्थंद्विजोत्तमम् ।  
 हत्वाचान्द्रायणंकुर्यात् त्रिंशद्गोशचैवदक्षिणा ॥१८॥  
 चाण्डालंहतवानकश्चिद् ब्राह्मणोयदिकञ्चन ।  
 प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं गोद्वयंदक्षिणांददेत् ॥ १९ ॥  
 क्षत्रियेणापिवैश्येन शूद्रेणैवेतरेणच ।  
 चाण्डालेवधसंप्राप्ते कृच्छ्राद्धेनविशुद्ध्यति ॥ २० ॥  
 चौरःश्वपाकश्चाण्डालो विप्रेणाभिहतोयदि ।  
 अहोरात्रोषितःस्नात्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ २१ ॥  
 श्वपाकंचापिचाण्डालं विप्रःसंभाषतेयदि ।  
 द्विजैःसंभाषणंकुर्यात्सावित्रींचसकृज्जपेत् ॥ २२ ॥  
 चाण्डालैःसहसुप्तं तु त्रिरात्रमुपवासयेत् ।  
 चाण्डालैकपथंगत्वा गायत्रीस्मरणाच्छुचिः ॥ २३ ॥  
 चाण्डालदर्शनेसद्य आदित्यमवलोकयेत् ।  
 चाण्डालस्पर्शनेचैव सचैलंस्नानमाचरेत् ॥ २४ ॥

को और निन्दित कर्म करने वाले ब्राह्मण को जो मार डाले वह चांद्रायण व्रत करे और ३०  
 गौ दक्षिणा में देवे ॥ १८ ॥ यदि कोई ब्राह्मण किसी चाण्डाल को मार डाले तो कृच्छ्र  
 प्राजापत्य व्रत करे और दो गौ दक्षिणा में देवे ॥ १९ ॥ यदि क्षत्रिय वैश्य वा शूद्र  
 वा अन्य कोई वर्णसंकर ये चाण्डाल को मार डालें तो आषा कृच्छ्र व्रत करने से शुद्ध  
 होते हैं ॥ २० ॥ यदि किसी ब्राह्मण ने चौर, श्वपाक, चाण्डाल इन को मार डाला हो  
 तो एक दिन रात उपवास पूर्वक स्नान करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥ २१ ॥  
 यदि श्वपाक और चाण्डाल इन के संग ब्राह्मण संभाषण करे तो ब्राह्मणों के साथ  
 संभाषण करके एक बार गायत्री जपे ॥ २२ ॥ जो ब्राह्मण चाण्डाल के संग सोवे तो  
 तीन दिन उपवास करने से और चाण्डाल के संग एक मार्ग में चलें तो गायत्री के  
 स्मरण से शुद्ध होता है ॥ २३ ॥ चाण्डाल का दर्शन करे तो शीघ्र ही सूर्य का दर्शन  
 करे और चाण्डाल का स्पर्श करे तो सचैल [ वस्त्रों सहित ] स्नान करे ॥ २४ ॥

चाण्डालखातवापीषु पीत्वासलिलमग्रजः ।  
 अज्ञानाच्चैकनक्तेन त्वहोरात्रेण शुद्ध्यति ॥ २५ ॥  
 चाण्डालभाण्डसंस्पृष्टं पीत्वाकूपगतं जलम् ।  
 गोमूत्रग्रावकाहारस्त्रिरात्राच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥ २६ ॥  
 चाण्डालघटसंस्थंतु यत्तोयं पिवति द्विजः ।  
 तत्क्षणात्क्षिपते यस्तु प्राजापत्यं समाचरेत् ॥ २७ ॥  
 यदि न क्षिपते तोयं शरीरे यस्य जीर्यति ।  
 प्राजापत्यं न दातव्यं कृच्छ्रं सांतपनं चरेत् ॥ २८ ॥  
 चरेत् सांतपनं विप्रः प्राजापत्यं तु क्षत्रियः ।  
 तदर्थं तु चरेद्वैश्यः पादं शूद्रस्य दापयेत् ॥ २९ ॥  
 भाण्डस्थमन्त्यजानां तु जलं दधिपयः पिवेत् ।  
 ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चैव प्रमादतः ॥ ३० ॥  
 ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनां तु निष्कृतिः ।  
 शूद्रस्य चोपवासेन तथादानेन शक्तिः ॥ ३१ ॥

चाण्डाल की खोदी वायड़ी वा कुआ में अज्ञान से ब्राह्मण जल पीवे तो एक रात भए और जान कर पीवे तो एक दिन रात व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २५ ॥ जिस कूप में चाण्डाल के वर्त्तन का स्पर्श हुआ ही उस कूप का जल पिया हो तो गोमूत्र और कुलत्थ को खाकर एक दिन रात व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ यदि चाण्डाल के घट का जल ब्राह्मण पीलेवे और उस जल को उसी क्षण में यमन करदे तो एक प्राजापत्य व्रत करे ॥ २७ ॥ यदि यमन न करदे और उस जल को पचाजाय तो प्राजापत्य न करे किन्तु सांतपन कृच्छ्र व्रत करे ॥ २८ ॥ ब्राह्मण कृच्छ्र सांतपन व्रत, क्षत्रिय प्राजापत्य, वैश्य आधा प्राजापत्य और शूद्र चौथाई प्राजापत्य व्रत करे ॥ २९ ॥ यदि अन्त्यजों के पात्र में रखे जल, दही, दूध, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वा शूद्र भूल करके पी लेवें तो ॥ ३० ॥ इसी पुस्तक के अ० ११ में कहे व्रत के ब्रह्मकूर्च उपवास से द्विजातिधर्मों की और एक उपवास तथा यथाशक्ति किये दान से शूद्र की शुद्धि होती है ॥ ३१ ॥ यदि किसी प्रकार अज्ञान से ब्राह्मण चाण्डाल के अन्नको खालेवे तो गोमूत्र

भुङ्क्तेऽज्ञानाद्विजश्रेष्ठः चाण्डालान्नैकथंचन ।  
 गोमूत्रयावक्काहारो दशरात्रेण शुद्ध्यति ॥ ३२ ॥  
 एकैकं ग्रासमश्नीयाद् गोमूत्रयावकस्य च ।  
 दशाहं नियमस्थस्य व्रतंतत्तु विनिर्दिशेत् ॥ ३३ ॥  
 अविज्ञातस्तु चाण्डालो यत्र वेश्मनितिष्ठति ।  
 विज्ञात उपसंन्यस्य द्विजाः कुर्युरनुग्रहम् ॥ ३४ ॥  
 मुनिवक्त्रोद्गतान्धमान् गायन्तो वेदपारगाः ।  
 प्रतन्तमुद्वरेयुस्तं धर्मज्ञाः पापसंकटात् ॥ ३५ ॥  
 दध्ना च सर्पिषा चैव क्षीरगोमूत्रयावकम् ।  
 भुञ्जीत सहभृत्यैश्च त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ ३६ ॥  
 ग्रहं भुञ्जीत दध्ना च ग्रहं भुञ्जीत सर्पिषा ।  
 ग्रहं क्षीरेण भुञ्जीत एकैकेन दिनत्रयम् ॥ ३७ ॥  
 भावदुष्टं न भुञ्जीत नोच्छिष्टं कृमिदूषितम् ।  
 दधिक्षीरस्य त्रिपलं पलमेकं घृतस्य तु ॥ ३८ ॥

और कुलत्थ को खाकर दश दिन में शुद्ध होता है ॥ ३२ ॥ और गोमूत्र में कुलत्थ को मिलाकर दश दिन तक एक २ ग्रास खाये और नियमसे रहे यही व्रत उस ब्राह्मण के लिये वताना चाहिये ॥ ३३ ॥ यदि बिना जाने कोई चाण्डाल द्विजों के घर में ठहरे तो जान लेने पर उसे निकाल कर द्विज ब्राह्मण लोग उस ब्राह्मण पर दया कर उसे शुद्ध करें ॥ ३४ ॥ मुनियों के मुख से निकसे धर्मों को गाते हुये वेद के पार पढ़ें हुये धर्म के ज्ञाता विद्वान् लोग पतित हुए उस ब्राह्मण को प्रायश्चित्त कराके पाप संकट से उद्धार करें ॥ ३५ ॥ वह ब्राह्मण जिस के घर में अज्ञात चाण्डाल मिल जुल के रहा हो दही, घी, दूध, गोमूत्र, और कुलत्थ इन को भृत्यों और स्त्री पुत्रादि के सङ्ग निम्न प्रकार से खावे और त्रिकाल स्नान करे ॥ ३६ ॥ तीन दिन दही से, तीन दिन दूध से (यावक) नाम कुलमाष- (कुलथी) खावे और तीन दिन एक २ दही आदि खावे ॥ ३७ ॥ जिस में कोई दोषा- रोपण हो गया हो वा दूषित होनेकी शंका होगई हो, जो किसी का झूठा हो, जिसमें कृमि पड़ गये हों, उसे न खावे । दही और घी ऊपर कहे व्रतमें तीन २ पल (अर्थात् चार तोलाका एक पल होता तब १२ तोले के तीन पल हुए) और घी एक पल खावे ॥ ३८ ॥

भस्मनातुभवेच्छुद्धिरुभयोःकांस्यतामूयोः ।  
 जलशौचेनवस्त्राणां परित्यागेनमृन्मयम् ॥ ३९ ॥  
 कुसुम्भगुडकार्पास-लवणतैलसर्पिणी ।  
 द्वारेकृत्वातुधान्यानि दद्याद्वेश्मनिपावकम् ॥ ४० ॥  
 एवंशुद्धस्ततःपश्चात् कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ।  
 त्रिशतं गावृषचैकं दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४१ ॥  
 पुनर्लेपनखातेन होमजाप्येनशुद्ध्यति ।  
 आधारेणचविप्राणां भूमिदोषोनविद्यते ॥ ४२ ॥  
 चाण्डोलैःसहसंपर्कं मांसमासाहुमेववा ।  
 गोमूत्रयावकाहारो मासाहुर्नविशुद्ध्यति ॥ ४३ ॥  
 रजकीचर्मकारीच लुब्धकीवेणुजीविनी ।  
 चातुर्वर्ण्यस्यतुगृहे त्वविज्ञातानुतिष्ठति ॥ ४४ ॥  
 ज्ञात्वातुनिष्कृतिकुर्यात् पूर्वोक्तस्याहुमेवतु ।  
 गृहदाहं कुर्वीत शेषंसर्वचकारयेत् ॥ ४५ ॥

जिसके घरमें चाण्डाल रह चुका हो उस घरके कांसे और तंबिके पात्रोंकी शुद्धि भस्म से, जलमें धोनेसे वस्त्रोंकी शुद्धि होती और मट्टीके पात्र अशुद्ध हों तो त्याग देने चाहिये ॥ ३९ ॥ फिर घर के द्वारपर कुसुम, गुड़, कपास, लवण, तैल वी अन्न इनको निकाल कर घर में अग्नि लगा देवे ॥ ४० ॥ इस प्रकार शुद्ध होकर ब्राह्मणों को भोजन कराके तृप्त करें और तीनसौ गौ एक बैल ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ४१ ॥ दुवारा लीपना, खोदना, होम, जप, और ब्राह्मणों के बैठने से पृथ्वी शुद्ध होती है फिर उस भूमि में कुछ दीप नहीं रहता ॥ ४२ ॥ यदि चाण्डालोंके संग एक महीना वा पन्द्रह दिन संसर्ग रहे तो पन्द्रह १५ दिन तक गोमूत्र और कुलथी खाकर शुद्ध होता है ॥ ४३ ॥ रजकी (घोबिन) चमारी, व्याधनी, घांस के पात्र बना के जीविका करने वाले की स्त्री, ये यदि अज्ञान से चारों वर्णों के घर में निवास करें तो ॥ ४४ ॥ जानने पीछे पूर्वोक्त का आधा प्रायश्चित्त करें घर को जलावे नहीं शेष सब कृत्य आधा करें ॥ ४५ ॥

गृहस्याभ्यन्तरंगच्छेच्चाण्डालोयदिकस्यचित् ।  
 तमागाराद्विनिःसार्य मृद्धाण्डंतुविसर्जयेत् ॥ ४६ ॥  
 रसपूर्णंतुमृदभाण्डं नत्यजेत्तुकदाचन ।  
 गोमयेनतुसंमिश्रैर्जलैः प्रोक्षेद्गृहंतथा ॥ ४७ ॥  
 ब्राह्मणस्यव्रणद्वारे पूयशोणितसंभवे ।  
 कृमिस्तपद्यतेयस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ ४८ ॥  
 गवांमूत्रपुरीषेण दध्नाक्षीरेणसर्पिषा ।  
 त्र्यहंस्नात्वाचपीत्वाच कृमिदष्टः शुचिर्भवेत् ॥ ४९ ॥  
 क्षत्रियोऽपिसुवर्णस्य पञ्चमाषान्प्रदायतु ।  
 गोदक्षिणांतुवैश्यस्याप्युपवासंविनिर्द्दिशेत् ॥ ५० ॥  
 शूद्राणांनोपवासः स्याच्छूद्रोदानेनशुद्ध्यति ।  
 ब्राह्मणांस्तुनमस्कृत्य पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ५१ ॥  
 अच्छिद्रमितियद्वाक्यं वदन्तिक्षितिदेवताः ।  
 प्रणम्यशिरसाग्राह्यमग्निष्टोमफलंहितत् ॥ ५२ ॥

यदि किसी के घर के भीतर चांडाल चला जाय तो उस को घर से बाहर निकाल कर मिट्टी के पात्रों को फेंक देवे ॥ ४६ ॥ परन्तु रस के भरे मिट्टी के पात्रों को कदापि न त्यागै और गोबर मिले जलसे घर को लीपे वा छिड़के ॥ ४७ ॥ राध ( पीव ) और रधिर से भरे ब्राह्मणके घाव में यदि कृमि ( कीड़े ) पड़ जाय तो प्रायश्चित्त कैसे हो सो कहते हैं ॥ ४८ ॥ गोमूत्र, गोबर, गोदही गोदूध गोघृत इनको मिला कर तीन दिन स्नान और इन को तीन दिन पीकर वह कीड़ों का काटा हुआ पुरुष शुद्ध होता है ॥ ४९ ॥ क्षत्रिय के घाव में यदि कृमि पड़ गये हों तो पांच मासे सुवर्ण का दान देवे । वैश्य एक गौ की दक्षिणा देवे और एक उपवास करे तब शुद्ध होता है ॥ ५० ॥ शूद्रों को उपवास का निषेध है इस से शूद्र दान से शुद्ध होता है । शूद्र दान देने पश्चात् ब्राह्मणों को प्रणाम कर और पञ्चगव्य का प्राशन करने से शुद्ध होता है ॥ ५१ ॥ जिस काम को ब्राह्मणलोग ( अच्छिद्रमस्तु ) ऐसा कहदेवें उस वाक्य को सब लोग शिरोधार्य मान कर ग्रहण करें क्योंकि उस से अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है ॥ ५२ ॥ जप का छिद्र तप का छिद्र और यज्ञ कर्म का छिद्र नाम जो

जपच्छिद्रं तपश्छिद्रं यच्छिद्रं यज्ञकर्मणि ।  
 सर्वं भवति निश्छिद्रं ब्राह्मणैरुपपादितम् ॥ ५३ ॥  
 व्याधिव्यसनि निश्चान्ते दुर्मिक्षे डामरे तथा ।  
 उपवासो व्रतो होमो द्विजसंपादितानिवै ॥ ५४ ॥  
 अथवा ब्राह्मणास्तुष्टाः सर्वे कुर्वन्त्यनुग्रहम् ।  
 सर्वान् कामानवाप्नोति द्विजैः संवर्धिता शिषा ॥ ५५ ॥  
 दुर्बलानुग्रहः प्रोक्तस्तथा वै बालवृद्धयोः ।  
 ततोऽन्यथा भवेद्दोषस्तस्मान्नानुग्रहः स्मृतः ॥ ५६ ॥  
 स्नेहाद्वायदिवालोभाद्भयादज्ञानतोऽपि वा ।  
 कुर्वन्त्यनुग्रहं ये तु तत्पापं तेषु गच्छति ॥ ५७ ॥  
 शरीरस्याऽत्यये प्राप्ते वदन्ति नियमं तु ये ।  
 महत्कार्योपरोधेन न स्वस्थस्य कदाचन ॥ ५८ ॥  
 स्वस्थस्य मूढाः कुर्वन्ति नियमं तु वदन्ति ये ।  
 ते तस्य विघ्नकर्तारः पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥ ५९ ॥

कुछ बुद्धि है तपस्वी ब्राह्मणों के कहने से वह सब छिद्र रहित हो जाता है ॥ ५३ ॥  
 यदि शूद्र मनुष्य व्याधियों से वा किसी दुर्व्यसन से पीड़ित दुःखित हो, वा दुर्मिक्षे  
 से पीड़ित हो, वा लूट लड़ाई आदि से दुःखित हो तो उपवास, व्रत, और होम सु-  
 पात्र ब्राह्मण द्वारा करावे ॥ ५४ ॥ अथवा प्रसन्न संतुष्ट हुए सब ब्राह्मण लोग अनुग्रह  
 (रूपा) करते हैं । अर्थात् ब्राह्मणों के आशीर्वाद से बड़ा हुआ वह शूद्र जब काम-  
 नाशों को प्राप्त होता है ॥ ५५ ॥ निर्वल (असमर्थ), बालक, और वृद्ध इन पर अनुग्रह  
 करना चाहिये अर्थात् अत्यल्प प्रायश्चित्त इनसे न कराना चाहिये । यदि इनसे भिन्न म-  
 नुष्यों पर अनुग्रह किया जाय अर्थात् ठीक प्रायश्चित्त न कराया जाय तो ठीक नहीं  
 है ॥ ५६ ॥ उस को अनुग्रह नहीं कहते जो स्नेह से, भय से, लोभ से अथवा अज्ञानसे  
 ब्राह्मण लोग किसी पर अनुग्रह करते हैं तो अपराधी का पाप उन को ही लगता है ।  
 ॥ ५७ ॥ जो ब्राह्मण लोग प्राणनाश की सम्भावना होने पर भी प्रायश्चित्त का विधान  
 करते, और बड़े महान् कार्यों की हानि होने के विचार से स्वस्थ पुरुष को नियम पालन  
 का निषेध करते हैं ॥ ५८ ॥ तथा जो मूढ़ लोग स्वस्थ पुरुष के पालनीय नियम को  
 लोभादि से स्वयं पालन करते वा कहते हैं । वे सब उस के कार्य में विघ्न करने वाले  
 होने से अपवित्र नरक में पड़ते हैं ॥ ५९ ॥ जो पुरुष विद्वानों से पूछे बिना आप ही

स्वयमेवव्रतंकृत्वा ब्राह्मणं योऽवमन्यते ।  
 वृथा तस्योपवासः स्यान्न स पुण्येन युज्यते ॥ ६० ॥  
 स एव नियमो ग्राह्यो यमेकोऽपि वदेद् द्विजः ।  
 कुर्याद्वाक्यं द्विजानां तु अन्यथा भूणहामवेत् ॥ ६१ ॥  
 ब्राह्मणा जङ्गमं तीर्थं तीर्थभूता हि साधवः ।  
 तेषां वाक्योदकेनैव शुद्ध्यन्ति मलिना जनाः ॥ ६२ ॥  
 ब्राह्मणा यानि भाषन्ते मन्यन्ते तानि देवताः ।  
 सर्वदेवमयो विप्रो न तद्वचनमन्यथा ॥ ६३ ॥  
 उपवासो व्रतं चैव स्नानं तीर्थं जपस्तपः ।  
 विप्रैः संपादितं यस्य संपूर्णं तस्य तद्वमवेत् ॥ ६४ ॥  
 अन्नाद्येकोट्यसंयुक्ते मक्षिकाकेशदूषिते ।  
 तदन्तरास्पृशेच्चापस्तदन्नं भस्मना स्पृशेत् ॥ ६५ ॥  
 भुञ्जानश्चैव यो विप्रः पादं हस्तेन संस्पृशेत् ।  
 समुच्छिष्टमसौ भुङ्क्ते यो भुङ्क्ते भुक्तभाजने ॥ ६६ ॥

व्रत करके ब्राह्मणों का तिरस्कार करता है। उस का उपवास वृथा है और उसे पुण्य फल प्राप्त नहीं होता ॥ ६० ॥ इससे वही नियम ग्रहण करना योग्य है जिसे एक भी धार्मिक ब्राह्मण कहे। और ब्राह्मणके वचन को अवश्य स्वीकार करे यदि न करेगा तो भ्रूणहत्या का दोष लगता है ॥ ६१ ॥ क्योंकि ब्राह्मण लोग जंगम (चेतन) तीर्थ हैं और साधु (सीधे) शुद्ध निर्विकार ब्राह्मण लोग भी तीर्थ रूप ही होते हैं। उन ब्राह्मणों के वाक्य रूप जल से ही मलिन पुरुष शुद्ध हो जाते हैं ॥ ६२ ॥ ब्राह्मण लोग जिन धर्मयुक्त वाक्यों को कहते हैं उन्हें देवता भी मानते हैं। धर्मनिष्ठ ब्राह्मण सर्व देवताओं का रूप है इस से उस का वचन अन्यथा नहीं हो सकता ॥ ६३ ॥ उपवास व्रत-स्नान तीर्थयात्रा जप तप ये सब जिस के ब्राह्मण ने संपादन (अनुमोदन) कर दिये उस को ही इन का ठीक फल होता है ॥ ६४ ॥ यदि पकाये हुये अन्न में कीड़े मिल गये हों वा वह भोज्यान्न मक्खी और केशों से दूषित हो गया हो तो कीड़ा, मक्खी केशादि को निकाल के उस के बीच २ जल से धोकर शुद्ध करे और उस अन्न का भस्म से स्पर्श करे ॥ ६५ ॥ जो भोजन करता हुआ ब्राह्मण पग को दहिने हाथ से छलेवे तो अथवा किसी के जुंटे पात्र में भोजन करे तो उसका उच्छिष्ट भोजन करना

पादुकास्थोनमुज्जीत पर्यङ्कस्थः स्थितोऽपि वा ।  
 चाण्डालेन शुनादृष्टं भोजनं परिवर्जयेत् ॥ ६७ ॥  
 यदन्नं प्रतिषिद्धं स्यादन्नशुद्धिस्तथैव च ।  
 यथा पराशरेणोक्तं तथैवाहं वदामिव ॥ ६८ ॥  
 श्रुतं द्रोणादकस्यान्नं काकश्चानोपघातितम् ।  
 केनैदं शुद्ध्यते चेति ब्राह्मणेभ्यो निवेदयेत् ॥ ६९ ॥  
 काकश्चानावलीढं तु द्रोणान्नं न परित्यजेत् ।  
 वेदवेदाङ्गविद्विप्रैर्धर्मशास्त्रानुपालकैः ॥ ७० ॥  
 प्रस्थाद्वाविंशतिद्रोणः स्मृतो द्विप्रस्थ आढकः ।  
 ततो द्रोणाऽढकस्यान्नं श्रुतिस्मृतिविदो विदुः ॥ ७१ ॥  
 काकश्चानावलीढं तु गवाघ्रातं खरेण वा ।  
 स्वल्पमन्नं न त्यजेद्विप्रः शुद्धिद्रोणाढके भवेत् ॥ ७२ ॥  
 अन्नस्योद्धृत्य तन्मात्रं यच्च लालाहतं भवेत् ।  
 सुव्रणौदकमभ्युक्ष्य हुताशेनैव तापयेत् ॥ ७३ ॥

जानी ॥ ६६ ॥ खडामू पर बैठ कर वा खाट अथवा बिस्तरे पर बैठ कर अथवा खड़ा होकर भोजन न करे । कुत्ते और चांडाल के देखे हुये भोजन को त्याग देवे ॥ ६७ ॥ जो कोई अन्न निषिद्ध है वा जिस किसी अन्न की शुद्धि हो सकती है । व्यास जी कहते हैं कि इस उक्त विषयमें महर्षि पराशर ने जैसा विचार कहा है वैसे हम कहते हैं ॥ ६८ ॥ द्रोण वा आढक भर पकाये अन्न को यदि कौआ वा कुत्ता बिगाड़ देवे तो यह अन्न कैसे शुद्ध हो ऐसा ब्राह्मणों से कहे ॥ ६९ ॥ उस समय धर्मशास्त्र की मर्यादा के रक्षक और वेद वेदाङ्ग के जानने वाले ब्राह्मण लोग यह आज्ञा दें कि काक वा कुत्ते ने बिगाड़े द्रोण भर अन्न को न त्यागे ॥ ७० ॥ वार्हस प्रस्थ ( अंजली ) का एक द्रोण और दो प्रस्थ का एक आढक कहा जाता है । तिस से श्रुति स्मृति के ज्ञाता विद्वान् लोग द्रोणान्न तथा आढकाश को शुद्ध मानते हैं ॥ ७१ ॥ यदि कौआ वा कुत्ता ने खाटा और गौ वा गधे ने सूँघा खोड़ा अन्न हो तो त्याग देवे और वह पकाया अन्न द्रोण वा आढक भर हो तो उस की शुद्धि हो सकती है ॥ ७२ ॥ जितने अन्न में कौवे आदि का मुख लगा हो वा जितने में लार गिरी हो उतना निकाल देने बाद सुवर्ण के जल से छिड़क कर अग्नि से तपावे तब शुद्ध हो जाता है ॥ ७३ ॥ क्योंकि जिस

हुताग्नेन संस्पृष्टं सुवर्णसलिलेन च ।

विप्राणां ब्रह्मघोषेण भोज्यं भवति तत्क्षणात् ॥ ७४ ॥

स्नेहो वा गोरसो वाऽपि तत्र शुद्धिः कथं भवेत् ।

अल्पं परित्यजेत्तत्र स्नेहस्योत्पवनेन च ॥

अनलज्वालायाः शुद्धिर्गोरसस्य विधीयते ॥ ७५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथातो द्रव्यशुद्धिस्तु पराशरवचो यथा ।

दारवाणान्तु पात्राणां तत्क्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ १ ॥

मार्जनाच्च ज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मणि ।

चमसानां ग्रहाणां च शुद्धिः प्रक्षालनेन च ॥ २ ॥

चरूणां सुकृत्तुवाणाञ्च शुद्धिरुष्णेन वारिणा ।

भस्मना शुद्ध्यते कांस्यं ताम्रमम्लेन शुद्ध्यति ॥ ३ ॥

रजसा शुद्ध्यते नारी त्रिकलं यानगच्छति ।

नदीवेगेन शुद्ध्येत लेपो यदि न दृश्यते ॥ ४ ॥

अन्न में अग्नि का और सुवर्ण के जल का स्पर्श होता है उससे तथा ब्राह्मणों के वेद पाठ की ध्वनि से वह अन्न उसी समय खाने योग्य शुद्ध हो जाता है ॥ ७४ ॥ यदि स्नेह ( घी आदि ) हो वा गोरस ( दूध आदि ) होय तो उस की शुद्धि कैसे हो ? उस में से थोड़ा सा निकाल देवे और घी आदि स्नेह को छान लेवे और दूध को अग्नि की ज्वाला से तपा लेने से शुद्धि कही है ॥ ७५ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥ ६ ॥

अब महर्षि पराशर भगवान् के वचनानुसार द्रव्य की शुद्धि कहते हैं । कांठके पात्रों की तो उसी समय शुद्धि हो सकती है ॥ १ ॥ यज्ञ कर्म में यज्ञ के पात्रों की शुद्धि हाथ से मांजने से होती, अग्निष्टोमादि सोमयाग के चमस और सोम ग्रहों की शुद्धि जल में घोने से होती है ॥ २ ॥ चरूखाली, सुक्, सुक्, इन यज्ञपात्रों की उष्णजल से, कांसे के पात्र की भस्म से और ताम्र के पात्र की खटाई से मांजने पर शुद्धि होती है ॥ ३ ॥ यदि स्त्री ने पर पुरुष से व्यभिचार न किया हो किन्तु केवल मन से चलायमान हुई हो तो वह रजोदर्शन ( मासिक धर्म होने ) ही से शुद्ध हो जाती है और यदि नदी में कहीं अधिक मलिनता संलग्न न हो तो उस की साधारण

वापीकूपतडांगेषु दूषितेषुकथञ्चन ।

उद्धृत्यवैकुम्भशतं पञ्चगव्येन शुद्धयति ॥ ५ ॥

अष्टवर्षाभवेद्गौरी नववर्षातुरोहिणी ।

दशवर्षाभवेत्कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥ ६ ॥

प्राप्ते तु द्वादशे वर्षे यः कन्यां न प्रयच्छति ।

मासि सासिरजस्तस्याः पिबन्ति पितरोऽनिशम् ॥ ७ ॥

माता चैव पिता चैव ज्येष्ठो भ्राता तथैव च ।

त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम् ॥ ८ ॥

यस्तां समुद्बहेत् कन्यां ब्राह्मणो मदमोहितः ।

असंभाष्यो ह्यपाङ्क्तयः सविप्रो वृषलीपतिः ॥ ९ ॥

अशुद्धि प्रवाह के वेग से शुद्ध हो जाती है ॥ ४ ॥ बावड़ी, कूप और तालाब यदि ये किसी प्रकार दूषित हो जाय तो उन में से सौ बड़े जल निकाल कर पञ्चगव्य गेरु से शुद्ध हो जाते हैं ॥ ५ ॥ आठ वर्ष की कन्या को गौरी, नौ वर्ष की रोहिणी, और दश वर्ष की को कन्या ही कहते हैं और दश वर्ष से ऊपर रजस्वला कोटि में गिनी जाती है ॥ ६ ॥ जो मनुष्य बारह वर्ष की कन्या का विवाह नहीं करता उसके पितर महीने २ में उस लड़की के रज को पीते हैं ॥ ७ ॥ माता, पिता, और जेठा भाई ये तीनों रजस्वला कन्या को देख २ कर नरक में जाते (पाप के भागी) होते हैं ॥ ८ ॥ जो ब्राह्मणादि मद से मोहित उस रजस्वला \* कन्या के साथ विवाह करता है वह भी संभाषण करने और पंक्ति में बैठाने योग्य नहीं क्योंकि वह स्वधर्म से पतित स्त्री

\* रजो दर्शन होने से पहिले विवाह करे यह सभी धर्मशास्त्रों की राय से विधिवाक्य है । यदि अच्छा घर खोजने आदि में देर लगे और कन्या रजस्वला होने लगे तो पितादि को दोष नहीं लगता यह उक्त विधि का अपवाद माना जायगा । माता पितादि नरक में जाते हैं यह उक्त विधिवाक्य का निन्दार्थवाद है । जिसका मतलब यह है कि रजस्वला होने पर सन्तानोत्पत्ति की सम्भावना है उसमें बाधा पड़ती है । इस कारण माता पितादि को अपराध लगता है । विधि से विरुद्ध करने का निन्दार्थवाद विध्यनुकूल करने की आवश्यकता और उक्त मता दिखाने के लिये है । विधि विरुद्ध करना ही पाप है और वह नरक नाम दुःख विशेष का हेतु है ॥

यः करोत्येकरात्रेण वृषलीसेवनादुद्विजः ।  
 समैक्ष्यभुग्जपन्नित्यं त्रिभिर्वर्षैर्विशुद्ध्यति ॥ १० ॥  
 अस्तंगतेयदासूर्ये चाण्डालं पतितं स्त्रियम् ।  
 सूतिकां स्पृशते चैव कथं शुद्धिर्विधीयते ॥ ११ ॥  
 जातवेदं सुवर्णं च सोममार्गं विलोक्य च ।  
 ब्राह्मणानुगतश्चैव स्नानं कृत्वा विशुद्ध्यति ॥ १२ ॥  
 स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी ब्राह्मणी तथा ।  
 तावत्तिष्ठेन्निराहारा त्रिरात्रेणैव शुद्ध्यति ॥ १३ ॥  
 स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी क्षत्रिया तथा ।  
 अर्द्धकृच्छ्रं चरेत्पूर्वा पादमेकमन्तन्तरा ॥ १४ ॥  
 स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी वैश्यजा तथा ।  
 पादहीनं चरेत्पूर्वा पादमेकमन्तन्तरा ॥ १५ ॥  
 स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी शूद्रजा तथा ।  
 कृच्छ्रेण शुद्ध्यते पूर्वा शूद्रादानेन शुद्ध्यति ॥ १६ ॥

का पति है ॥ ९ ॥ जो द्विज ब्राह्मणादि पुरुष एक रात भर में जितना पाप वृषली (वेश्या) का सेवन करनेसे प्राप्त करता है वह मित्राका अन्न खाकर और जप करता हुआ तीन वर्ष तक किये प्रायश्चित्त से शुद्ध होता है ॥ १० ॥ यदि सूर्य के अस्त हो जाने पर चाण्डाल, पतित, और सूतिका स्त्री इनका स्पर्श करे तो कैसे शुद्धि कही है सो कहते हैं ॥ ११ ॥ अग्नि, सुवर्ण और चन्द्रमा का मार्ग इनको देख कर और ब्राह्मणों की आँका से स्नान करके शुद्ध होता है ॥ १२ ॥ यदि दो रजस्वला ब्राह्मणी परस्पर स्पर्श करें तो रजोदर्शन की समाप्ति तक निराहार रहें तब रजो दर्शन के तीन ही दिन में शुद्ध होजाती हैं ॥ १३ ॥ यदि ब्राह्मणी और क्षत्रिया रजस्वला परस्पर छू जायें तो ब्राह्मणी अर्द्ध कृच्छ्र व्रत और क्षत्रिया चौथाई कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ १४ ॥ यदि रजस्वला ब्राह्मणी और वैश्या परस्पर स्पर्श करलें तो ब्राह्मणी पौन कृच्छ्रव्रत और वैश्या चौथाई कृच्छ्र व्रत करे ॥ १५ ॥ यदि रजस्वला ब्राह्मणी और शूद्रा परस्पर स्पर्श कर लें तो ब्राह्मणी एक कृच्छ्रसे और शूद्रा स्त्री दान करनेसे ही शुद्ध हो जाती है ॥ १६ ॥

स्नातारजस्वलायातु चतुर्थेऽहनिशुद्ध्यति ।  
 कुर्याद्रजोनिवृत्तौतु दैवपित्र्यादिकर्मच ॥ १७ ॥  
 रोगेणयद्रजःस्त्रीणामन्वहंतुप्रवर्त्तते ।  
 नाऽशुचिःसाततस्तेन तत्स्याद्वैकारिकमलम् ॥ १८ ॥  
 साध्वाचारानतावत्स्याद्रजोयावत्प्रवर्त्तते ।  
 रजोनिवृत्तौगम्यास्त्री गृहकर्मणिचैवहि ॥ १९ ॥  
 प्रथमेऽहनिचाण्डाली द्वितीयेब्रह्मघातिनी ।  
 तृतीयेरजकीप्रोक्तां चतुर्थेऽहनिशुद्ध्यति ॥ २० ॥  
 आतुरेस्नानउत्पन्ने दशकृत्वोह्यनातुरः ।  
 स्नात्वास्नात्वास्पृशेदेनं ततःशुद्ध्येत्सआतुरः ॥ २१ ॥  
 उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः शुनाशूद्रेणवाद्विजः ।  
 उपोष्यरजनीमेकां पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ २२ ॥  
 अनुच्छिष्टेनशूद्रेण स्पर्शेस्नानंविधीयते ।  
 तेनोच्छिष्टेनसंस्पृष्टः प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २३ ॥

जो रजस्वला स्त्री स्नान करके चौथे दिन शुद्ध होती है वह रज के निवृत्त होने पर देवता तथा पितृ आदि सम्बन्धी कर्मों में अपने पति के साथ सम्मिलित हो सकती है ॥ १७ ॥ जो रोग के कारण प्रतिदिन स्त्रियों के रजोघर्म होता है उस रज से वह स्त्री अशुद्ध नहीं होती क्योंकि वह मल रोग विकार जन्य माना गया है ॥ १८ ॥ जब तक रजोदर्शन रहता है तब तक शुद्ध आचरण न करे रज की निवृत्ति होने पर ही स्त्री गृहस्था के काम और संग करने योग्य होती है ॥ १९ ॥ पहिले दिन चाण्डाली के तुल्य अशुद्ध, दूसरे दिन ब्रह्महत्यारी के तुल्य, तीसरे दिन रजकी (धोविन) के तुल्य अशुद्ध जानना और चौथे दिन शुद्ध होती है ॥ २० ॥ यदि रोगीको स्नान करनेकी आवश्यकता हो और वह स्नान करने योग्य न हो तो नीरोग मनुष्य दशवार स्नान कर उस रोगी का स्पर्श करे तब वह स्नान किये के तुल्य शुद्ध हो जाता है ॥ २१ ॥ यदि ब्राह्मण जठन खाते हुएकुत्ते वा शूद्र का स्पर्श करले तो एक रात उपवास करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥ २२ ॥ जो उच्छिष्ट न हो ऐसा शूद्र ब्राह्मण का स्पर्श कर लेवे तो स्नान ही करे । यदि उच्छिष्ट शूद्र स्पर्श करले तो प्राजापत्य प्रत करे ॥ २३ ॥

भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं सुराययन्नलिप्यते ।  
 सुरामात्रेणसंसृष्टं शुद्ध्यतेऽग्न्युपलेखनैः ॥ २४ ॥  
 गवाघ्रातानिकांस्यानि श्वकाकोपहतानिच ।  
 शुद्ध्यन्तिदशभिःक्षारैः शूद्रोच्छिष्टानिग्रानिच ॥ २५ ॥  
 गण्डूषपादशौचं च कृत्वावैकांस्यभाजने ।  
 षण्मासान्भुविनिक्षिप्य उद्धृत्यपुनराहरेत् ॥ २६ ॥  
 आयसेष्वपसारेण सीसस्याग्नीविशोधनम् ।  
 दन्तमस्थितथाशृङ्गं रौप्यंसौवर्णभाजनम् ॥ २७ ॥  
 मणिपाषाणशङ्खान्श्च एतान्प्रक्षालयेज्जलैः ।  
 पाषाणेतुपुनर्घर्ष-एषाशुद्धिरुदाहृता ॥ २८ ॥  
 अद्भुतिस्तुप्रोक्षणंशौचं बहूनांधान्यवाससाम् ।  
 प्रक्षालनेनत्वल्पानामद्भुतिःशौचंविधीयते ॥ २९ ॥  
 मृद्भाण्डदहनाच्छुद्धिर्धान्यानांमार्जनादपि ।  
 वेणुवल्कलचौराणां क्षीमकार्पासवाससाम् ॥

जिसमें मदिरा का संसर्ग न हुआ हो ऐसा कांसेका पात्र भस्म से, और जिसमें मदिरा लग गई हो वह अग्निमें तपानेसे, और घिसने लोलनेसे, शुद्ध होता है ॥ २४ ॥ गौके सूँघे, कुत्ता और कौआ के लूए, और शूद्र ने जिन में खाया हो ऐसे कांसेके पात्र दश खारी, वस्तु लगाने से शुद्ध होते हैं ॥ २५ ॥ कांसे के पात्र में कुल्ला करे वा पग धोवे तो उसे छः महीने तक पृथ्वी में गाड़ रखे फिर निकाले तब भोजनादि के योग्य शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ लोहे के पात्र स्थानान्तर में कर देने ही से शुद्ध हो जाते हैं । और सीसे के पात्रों की शुद्धि अग्नि में तपाने से होती है । दांत, हड्डी, सींग, और चांदी सोने के पात्र ॥ २७ ॥ मणि, पत्थर-और शंख इनको जलसे धोके शुद्ध करे परन्तु पत्थर के पात्र को फिर से घिसें तब शुद्ध होता है ॥ २८ ॥ बहुत से धान्य की राशि तथा बहुत से बल किसी कारण अशुद्ध हो जाय तो कुशों द्वारा जल छिड़कने से तथा थोड़े बल वा धान्य हीं तो जल में धोने से शुद्ध होते हैं ॥ २९ ॥ मिट्टी के पात्र की अग्नि में फिर से पकाने पर, वनों की मार्जन (जल सेचन) से, वांस, बकल, चीर

और्णामानेत्रपहानां प्रोक्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ ३० ॥  
 मुञ्जोपस्करशूर्पाणां शाणस्यफलचर्मणाम् ।  
 तृणकाष्ठादिरज्जूनामुदकाभ्युक्षणंमतम् ॥ ३१ ॥  
 तूलिकाद्युपधानानि रक्तवस्त्रादिकानिच ।  
 शोषयित्वा कर्कशापेन प्रोक्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ ३२ ॥  
 मार्जारमक्षिकाक्रीट पतङ्गकृमिदुर्गुराः ।  
 मेघ्यामेघ्यस्पृशन्तो ये नोच्छिष्टान्मनुरब्रवीत् ॥ ३३ ॥  
 महींस्पृष्ट्वागतं तोषं याश्चाप्यन्योन्यविप्रुषः ।  
 भुक्तोच्छिष्टं तथा स्नेहं नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत् ॥ ३४ ॥  
 ताम्बूलेक्षुफलान्येव भुक्तस्नेहानुलेपने ।  
 मधुपर्कचसोमेच नोच्छिष्टं धर्मतोविदुः ॥ ३५ ॥  
 रथ्याकर्द्वमतोयानि नावःपन्थास्तृणानिच ।  
 मरुताकैणशुद्धयन्ति पक्वेष्टकचितानिच ॥ ३६ ॥

( किल्ला कपड़ा ) अतसी वस्त्र, और कपास के वस्त्र, ऊन और नेत्र ( घेतआदि )  
 के वस्त्र इन की पहोने ( फींचने ) से शुद्धि मानी है ॥ ३० ॥ मूँजकी वस्तु सूप शाण  
 की वस्तु, फल, चाम, तृण, काठ, रस्सी इनकी जल छिड़कने से शुद्धि मानी है ॥ ३१ ॥  
 रुई आदि के, तकिये तथा लाल वस्त्रादि को सूर्य के घाम में सुखा के जल छिड़कने  
 से शुद्धि होता इष्ट है ॥ ३२ ॥ विलाव मक्खी, कीड़े, पतंगे, कृमि, मेंढक, ये सब पवित्र  
 वा अपवित्र वस्तु का स्यास करें तो वस्तु उच्छिष्ट अशुद्ध नहीं होता यह मनु जी ने  
 कहा है ॥ ३३ ॥ अशुद्ध वा नीच ने छुआ पृथ्वी में बहता हुआ जल, और परस्पर  
 बोलने से गिरने वाले धूक के छोटि तथा रसोईखाने में भोजन से बचा घी आदि  
 स्नेह ये उच्छिष्ट नाम अशुद्ध नहीं होते यह भी मनु जी ने कहा है ॥ ३४ ॥ पान, गस्ने  
 स्नेह युक्त फल, जिसे में से खाया हो ऐसा घी आदि स्नेह मधुपर्क तथा सोमयागों  
 का सोमरस तथा घिसा हुआ केशर चन्दनादि इन में से कुछ भाग प्रथम किसी ने  
 खाया वा वर्त्ता हो तो शेष धर्मानुसार उच्छिष्ट वा अशुद्ध नहीं होता ॥ ३५ ॥ सड़क,  
 कीचड़, जल, नौका, मार्ग, तृण ( पलालचट्टाई आदि ) पकी ईंटों से बने ( मन्दिर  
 भित्ति आदि ) ये सब पवन और सूर्य के किरणों से शुद्ध होजाते हैं ॥ ३६ ॥ निरन्तर

अदुष्टाः संतताधारा वातोद्बधूताश्च रेणवः ।

स्त्रियो वृद्धाश्च बालाश्च न दुष्यन्ति कदाचन ॥ ३१ ॥

क्षुते निष्ठीवने चैव दन्तोच्छिष्टे तथाऽनृते ।

पतितानां च संभाषे दक्षिणं श्रवणं स्पृशेत् ॥ ३२ ॥

अग्निरापश्च वेदः सोमसूर्या निलास्तथा ।

एते सर्वेऽपि विप्राणां श्रोत्रेतिष्ठन्ति दक्षिणे ॥ ३३ ॥

प्रभासादीनि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा ।

विप्रस्य दक्षिणे कर्णं सान्निध्यं मनुरब्रवीत् ॥ ३४ ॥

देशभङ्गे प्रवासे वा व्याधिषु व्यसनेष्वपि ।

रक्षि देवस्वदेहादि पश्चादुर्मसमाचरेत् ॥ ३५ ॥

येन केन च धर्मेण मृदुना दारुणेन वा ।

उद्वरेद्वीनमात्मानं समर्थो धर्ममाचरेत् ॥ ३६ ॥

आपत्काले तु सम्प्राप्ते शौचाऽऽचारं न चिन्तयेत् ।

शुद्धिं समुद्वरेत् पश्चात् स्वस्थो धर्मसमाचरेत् ॥ ३७ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

के वेगसे उड़ी हुई धूलि, ( रजसला होने से मिश्र ) स्त्रियां, बालक, वृद्ध, ये स्नानादि किये बिना भी कभी दूषित नहीं होते ॥ ३१ ॥ छींकने, धूकने दांतीमें जूठन निकलने, कूठ धोलने, और पतितों के संग बोलने पर दहिने कान को स्पर्श करे ॥ ३२ ॥ अग्नि, जल, वेद, चन्द्रमा, सूर्य और वायु ये सब देवता ब्राह्मण के दहिने कान में निवास करते हैं ॥ ३३ ॥ प्रभासक्षेत्र आदि तीर्थ और गंगा आदि नदी, ये सब ब्राह्मण के कान में वास करते हैं यह मनु जी ने कहा है ॥ ३४ ॥ देश में गदुर होने, परदेश गमन करने, रोग, तथा व्यसन, विपत्तियों के समय में अपवित्र विरुद्धाचरण करता हुआ भी अपने शरीरादि की रक्षा करे और पीछे स्वस्थ दशा होने पर धर्म का आचार विचार कर लेवे ॥ ३५ ॥ कामलव फठोर जिस किसी धर्म से अपनी असमर्थ्य दीन दशा का उद्धार करे और समर्थ हो जाने पर फिर धर्म करे ॥ ३६ ॥ आपत्काल आ जाने पर शौच तथा आचार के विगड़ने को चिन्ता न करे । पीछे स्वस्थ दशा प्राप्त होने पर शुद्धि और धर्म का आचरण कर लेवे ॥ ३७ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवादमें सातवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ७ ॥

गवांयन्धनयोवत्रेतु भवेन्मृत्युरकामतः ।  
 अकामकृतपापस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १ ॥  
 वेदवेदाङ्गविदुषां धर्मशास्त्रंविजानताम् ।  
 स्वकर्मरतविप्राणां स्वकंपापंनिवेदयेत् ॥ २ ॥  
 अतज्जध्वंप्रवक्ष्यामि उपस्थानस्यलक्षणम् ।  
 उपस्थितोहिन्यायेन व्रतादेशनमर्हति ॥ ३ ॥  
 संशयोनिःसंशयेपापे नभुञ्जीतानुपस्थितः ।  
 भुञ्जानोवर्द्धयेत्पापं पर्षद्यन्नविद्यते ॥ ४ ॥  
 संशयेतुनभोक्तव्यं यावत्कार्यविनिश्चयः ।  
 प्रमादस्तुनकर्त्तव्यो यथैवासंशयस्तथा ॥ ५ ॥  
 कृत्वापापंनगूहेत गूह्यमानंविबुद्धते ।  
 स्वल्पंवाथप्रभूतंवा धर्मविदुभ्योनिवेदयेत् ॥ ६ ॥  
 तेहिपापकृतांवैद्या हन्तारश्चैवपाप्मनाम् ।  
 व्याधितस्ययथावैद्या बुद्धिमन्तोरुजापहाः ॥ ७ ॥

यदि अहान से बांधने वा जोड़ने से गीर्णों की मृत्यु हो जाय तो अनिच्छा से किये पाप का प्रायश्चित्त कैसे हो ? सो कहते हैं ॥ १ ॥ वेद वेदाङ्ग और धर्मशास्त्र को जो जानते हों और जो अपने कर्म में तत्पर हों ऐसे ब्राह्मणों से अपना पाप निवेदन करे ॥ २ ॥ इस से आगे विद्वानों की समा में उपस्थित ( हाजिर ) होने का स्वरूप कहते हैं क्योंकि जो न्याय से उपस्थित होता है वही व्रत के उपदेश योग्य है ॥ ३ ॥ यदि शीघ्र ही पाप का निश्चय हो जाय तो प्रायश्चित्त के लिये विद्वत्समा में उपस्थित हुये बिना भोजन न करे । जहां समा न हो वहां भी पहिले जो भोजन करता है वह पाप को बढ़ाता है ॥ ४ ॥ यदि संशय होय कि मुझ से अपराध हुआ है वा नहीं ? तो कर्त्तव्य प्रायश्चित्त का निश्चय होने तक भोजन न करे और अपराध के निश्चय करनेमें प्रमाद ( भूल ) भी न करे किन्तु जिस प्रकार सन्देह मिट जाय वैसा ही करे ॥ ५ ॥ अपराध को ढकके, कदापि न छिपावे, क्योंकि छिपाया हुआ पाप बढ़ता है—थोड़ा पाप हो वा बहुत हो उसे धर्म के शाताओं को निवेदन करके प्रायश्चित्त पूछे ॥ ६ ॥ क्योंकि वे ही लोग पाप करने वाले सैनियों के व्रथ हैं और पापों का नाश करने वाले हैं—जैसे

पञ्चपूर्वमयाप्रोक्तास्तेषांचासंभवेत्रयः ।

स्ववृत्तिपरितुष्टाये परिषत्साऽपिकीर्तिता ॥ २२ ॥

अतज्जुर्ध्वंतुयेविप्राः केवलं नामधारकाः ।

परिषत्त्वं न तेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ॥ २३ ॥

यथाकाष्ठमयोहस्ती यथाचर्ममयोमृगः ।

ब्राह्मणस्त्वनधीयान-स्त्वयस्तेनामधारकाः ॥ २४ ॥

ग्रामस्थानं यथाशून्यं यथाकूपस्तु निर्जलः ।

यथाहुतमनग्नौ च अमन्त्रो ब्राह्मणस्तथा ॥ २५ ॥

यथाषण्डोऽफलः स्त्रीषु यथागौरूपराऽफला ।

यथाचाज्ञोऽफलदानं तथाविप्रोऽनृचोऽफलः ॥ २६ ॥

चित्रकर्म यथानेकै-रङ्गैरुन्मील्यते शनैः ।

ब्राह्मण्यमपितद्वद्धि संस्कारैर्मन्त्रपूर्वकैः ॥ २७ ॥

प्रायश्चित्तं प्रयच्छन्ति ये द्विजानामधारकाः ।

ते द्विजाः पापकर्माणः समेतानरकं ययुः ॥ २८ ॥

कोई एक भी हो तो उसे परिषत् ( धर्मसभा ) कह सकते हैं ॥ २१ ॥ हमने जो पहिले प्रायश्चित्त द्वात्री समिति के पांच सभ्य कहे हैं यदि वे पांचों न मिलें तो अपनी वृत्ति ( जीविका ) करने से सन्तोषी तीन भी परिषत् परिषत् ( धर्मसभा ) कहते हैं ॥ २२ ॥ इन से भिन्न जो ब्राह्मण केवल नाम के धारण करने वाले हैं वे चाहे हजार गुणों भी हों तो उन की धर्मसभा नहीं हो सकती ॥ २३ ॥ जैसे काठ का हाथी जैसे चामका हिरण जैसे ही वेद के बिना पढ़े ब्राह्मण हैं वे तीनों नाम के ही धारण करने वाले हैं ॥ २४ ॥ जैसा निर्जन ( जिस में कोई मनुष्य न हो वंश ) ग्राम, जैसा जल के बिना कूप ( अंधौसा ) जैसा अग्नि बिना अस्मादि में होम करना है ऐसा ही वेद मन्त्रों को पढ़े बिना ब्राह्मण भी शून्य मात्र है ॥ २५ ॥ जैसे स्त्रियों में नपुंसक वृथा है जैसे बंध्या गौ वृथा है और जैसे मूर्ख ब्राह्मण को दान देना वृथा है ऐसे ही वेद हीन ब्राह्मण वृथा है ॥ २६ ॥ जैसे चित्र-चींचने वालों की चित्रकारी अनेक रंगों से शनैः २ अति शो-भायमान चमकीली होती है इसी प्रकार मन्त्रों के द्वारा हुए अनेक संस्कारों से ब्राह्मण पन भी उज्ज्वल प्रकाशमान होता है ॥ २७ ॥ जो विद्या और तप से हीन नामधारी ब्राह्मण प्रायश्चित्त देते हैं वे सब प्रायों के कर्त्ता इकट्ठे होकर नरक में जाते हैं ॥ २८ ॥

ये पठन्ति द्विजावेदं पञ्चयज्ञरताश्रये ।  
 त्रैलोक्यन्तारयन्त्येव पञ्चेन्द्रियरता अपि ॥ २९ ॥  
 संप्रणीतः श्मशानेषु दीप्तिः सर्वभक्षकः ।  
 तथा च वेदविद्विप्रः सर्वभक्षोऽपि दैवतम् ॥ ३० ॥  
 अमेध्या नितु सर्वाणि प्रक्षिप्यन्ते यथोदके ।  
 तथैव किल्बिषं सर्वं प्रक्षिपेच्च द्विजानले ॥ ३१ ॥  
 गायत्रीरहितो विप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत् ।  
 गायत्रीब्रह्मतत्त्वज्ञाः संपूज्यन्ते जनैर्द्विजाः ॥ ३२ ॥  
 दुःशीलोऽपि द्विजः पूज्यो न तु शूद्रो जितेन्द्रियः ।  
 कः परित्यज्य गां दुष्टां दुहेच्छीलवर्ती खरीम् ॥ ३३ ॥  
 धर्मशास्त्ररथारूढा वेदखड्गधरा द्विजाः ।  
 क्रीडार्थं मपि यदुब्रूयुः स धर्मः परमः स्मृतः ॥ ३४ ॥  
 चातुर्वैद्यो विकल्पी च अङ्गविदुर्मपाठकः ।  
 त्रयश्चाश्रमिणो मुख्याः पर्षदेषादशावरा ॥ ३५ ॥

जो ब्राह्मण वेद को पढ़ते हैं वा जो पंचमहायज्ञों के करने में तत्पर हैं वे पाँचों इन्द्रियों के विषयों में आसक्त हों तो भी त्रिलोकी को तारने वाले ही हैं ॥ २९ ॥ जैसे जलता हुआ अग्नि श्मशानों में मुर्दा का भक्षक होने पर भी संसार का उद्धार करता देवता है इसी प्रकार सर्व भक्षक होने पर भी धर्म निष्ठ ब्राह्मण वेद का ज्ञाता होने से देवता ही है ॥ ३० ॥ जैसे संपूर्ण अपवित्र वस्तु वर्षादि के समय नद्यादि के जल में फेंके शुद्ध हो जाते हैं वैसे ही संपूर्ण पाप ब्राह्मण रूप अग्नि में छोड़ देने से भस्म हो जाते हैं अर्थात् वेद वेत्ता ब्राह्मण धर्मानुष्ठान रूप जप तपादि अग्नि से पापों को भस्म कर देते हैं ॥ ३१ ॥ गायत्री से हीन ब्राह्मण शूद्र से भी अधिक अशुद्ध होता है, (यह गायत्री न जानने वा न जपने का निन्दार्थवाद् है) और गायत्री रूप वेद के तत्त्व को जानने वाले ब्राह्मणों को मनुष्य पूजते हैं ॥ ३२ ॥ दुष्ट स्वभाव वाला भी ब्राह्मण शूद्र की अपेक्षा अच्छा पूज्य है और जितेन्द्रिय भी शूद्र वैसे पूज्य नहीं क्योंकि (निरुष्ट ब्राह्मण में भी कुछ ब्राह्मण पन अवश्य होगा) ऐसा कौन होगा ! जो दुष्ट गौ को छोड़ कर सुशीला गध्री को दुहे ॥ ३३ ॥ धर्मशास्त्र रूपी रथ में बैठे, वेद रूपी खड्ग (हथियारों) को धारण किये विद्वान् ब्राह्मण साधारण विचार से भी जो कुछ कहें वह भी उत्तम धर्म माना जाय ॥ ३४ ॥ चारों वैदों के ज्ञाता चार विद्वान्, पंचवा नैयायिक, छठा छः वेदज्ञों का ज्ञाता, सातवां धर्मशास्त्रों का पाठक और ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ,

प्रायश्चित्ते संमुत्पन्ने हीमान् सत्यपरायणः ।  
 मुहुरार्जवसंपन्नः शुद्धिं गच्छन्निमानवः ॥ ८ ॥  
 सचैलं वाग्यतः स्नात्वा क्लिन्नवासाः समाहितः ।  
 क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा ततः पर्षदमाव्रजेत् ॥ ९ ॥  
 उपस्थाय ततः शीघ्रमार्तिमान्धरणीं व्रजेत् ।  
 गात्रैश्च शिरसा चैव न च किंचिदुदाहरेत् ॥ १० ॥  
 सावित्र्याश्चापि गायत्र्याः संध्योपास्त्यग्नि कार्ययोः ।  
 अज्ञानात्कृषिकर्तारो ब्राह्मणानामधारकाः ॥ ११ ॥  
 अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् ।  
 सहस्रशः समेतानां परिषत्त्वं न विद्यते ॥ १२ ॥  
 यं वदन्ति तमोमूढा मूर्खा धर्ममतद्विदः ।  
 तत्पापं शतधा भूत्वा तद्वक्तृन्धिगच्छति ॥ १३ ॥  
 अज्ञात्वा धर्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तं ददाति यः ।  
 प्रायश्चित्ती भवेत्पूतः कित्तिवर्षं पर्षदिव्रजेत् ॥ १४ ॥

किं बुद्धिमान् वैद्य औषधद्वारा रोगी के रोग को दूर करने वाले होते हैं ॥ ७ ॥ प्रायश्चित्त  
 के समय, लज्जा युक्त हो सत्य धर्म में तत्पर और बारंबार नम्रता कोमलता को धारण  
 करने वाला क्षत्रिय वा वैश्य मनुष्य शुद्धि को प्राप्त हो जाता है ॥ ८ ॥ मौन धारण  
 कर सचैल स्नान करके गीले वस्त्र पहिने हुये सावधान हो कर पर्षद ( धर्म समा )  
 में जावे ॥ ९ ॥ फिर शीघ्र समा के समीप जाकर दुःखी हुआ शरीर और शिर से  
 ( साष्टांग ) पृथ्वी में पड़ जाय और कुछ न कहै ॥ १० ॥ सूर्यनारायण जिस के देवता  
 हैं ऐसी गायत्री, सन्ध्यावन्दन और अग्निहोत्र इन कामों को जो नहीं जानते और न  
 करते हैं किन्तु जो खेती करते हैं वे नाम मात्र के ब्राह्मण हैं ॥ ११ ॥ जिन के सन्ध्या-  
 दि कर्म करने का नियम नहीं, जो वेद मन्त्रों को नहीं जानते और जातिमात्र से जो  
 ब्राह्मण बने हैं ऐसे चाहे हजारों भी जिस में इकट्ठे हों वह परिषत् ( धर्म समा ) नहीं है  
 ॥ १२ ॥ धर्म के मर्म को न जानने वाले अज्ञानी मूर्ख ब्राह्मण लोग जो ( प्रायश्चित्त आदि )  
 बतलाते हैं वह पाप सौ गुणा होकर उन धर्म की व्यवस्था कहने वाले मूर्खों को प्राप्त  
 होता है ॥ १३ ॥ जो धर्मशास्त्रों को न जानकर प्रायश्चित्त देता है तो वह पापी पवित्र  
 हो जाता है और उस प्रायश्चित्ती का प्रायश्चित्त देने वाले को लगता है ॥ १४ ॥ वेदों

चत्वारोवात्रयोवापि यंत्रयुर्वेदपारगाः ।  
 सधर्मइतिविज्ञेयो नेतरैस्तुसहस्रशः ॥ १५ ॥  
 प्रमाणमार्गमार्गन्तो येधर्मप्रवदन्तिवै ।  
 तेषामुद्विजतेपापं सदभूतगुणवादिनाम् ॥ १६ ॥  
 यथाश्मनिस्थितंतोयं मारुतार्केणशुद्धयति ।  
 एवंपरिषदादेशान्नाशयेत्तद्गदुष्कृतम् ॥ १७ ॥  
 नैवगच्छतिकर्तारं नैवगच्छतिपर्षदम् ।  
 मारुताकादिसंयोगात्पापंनश्यतितोयवत् ॥ १८ ॥  
 चत्वारोवात्रयोवापि वेदवन्तोऽग्निहोत्रिणः ।  
 ब्राह्मणानांसमर्पाये परिपत्साविधीयते ॥ १९ ॥  
 अनाहिताग्नयोयेऽन्ये वेदवेदाङ्गपारगाः ।  
 पञ्चत्रयोवाधर्मज्ञाः परिपत्साऽपिकीर्तिता ॥ २० ॥  
 मुनीनामात्मविद्यानां द्विजानांयज्ञयाजिनाम् ।  
 वेदव्रतेपुस्नातानामेकोऽपिपरिषद्भवेत् ॥ २१ ॥

को पूर्ण रूपसे ठीक २ जानने वाले चार वा तीन विद्वान् ब्राह्मण जिसको कहें वही धर्म जानने और अन्य हजार भी मिलकर जिसे कहें वह धर्म नहीं ॥ १५ ॥ प्रमाण के मार्गको खोजते हुए जो परिषद लोग धर्म की व्यवस्था कहते हैं उन सत्य कहने वालों से पाप डरता कांपता है ॥ १६ ॥ जैसे पत्थर पर पड़ा जल पवन और सूर्यके तेजसे शुद्ध हो जाता है । ऐसे ही धर्म सभा की आज्ञा से किये प्रायश्चित्त से उस पापी का पाप भी नष्ट हो जाता है ॥ १७ ॥ वह पाप न तो करने वाले पर रहता और न सभा पर जाता किन्तु पवन और सूर्य के संयोग से पत्थर पर पड़े जल के समान नष्ट होजाता है ॥ १८ ॥ वेद के ज्ञाता अग्निहोत्री चार वा तीन जो शास्त्र जानने वाले ब्राह्मणों में समर्थ हों उसे परिषत् कहते हैं ॥ १९ ॥ अथवा जो अग्निहोत्री नहीं किन्तु वेद वेदाङ्गों के तत्त्व को जानने वाले और धर्म के मर्म को जानने वाले हों ऐसे पांच वा तीन को भी परिषत् ( धर्म सभा ) कह सकते हैं ॥ २० ॥ कुछ न बोलने वाले मौनव्रती वा अत्यल्पमितभाषी तपस्वी मुनि आत्मविद्या ( वेदान्त ) के ज्ञाता, द्विजों को यज्ञ कराने वाले, और वेदोक्त नियमों को ब्रह्मचर्य द्वारा समाप्त करके जिनने समावर्त्तन किया हो ऐसे ब्राह्मणों में से

राज्ञश्चानुमतेस्थित्वा प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ।

स्वयमेव न कर्तव्यं कर्तव्यास्वरूपनिष्कृतिः ॥ ३६ ॥

ब्राह्मणांस्तानतिक्रम्य राजा कर्तुं यदोच्छति ।

तत्पापं शतधाभूत्वा राजानमनुगच्छति ॥ ३७ ॥

प्रायश्चित्तं सदा दद्याद्देवतायतनाग्रतः ।

आत्मकृच्छ्रं ततः कृत्वा जपेद्भैवेदमातरम् ॥ ३८ ॥

सशिखं वपनं कृत्वा त्रिसंध्यमवगाहनम् ।

गवांमध्वेवसेद्रात्री दिवा गाश्चाप्यनुव्रजेत् ॥ ३९ ॥

उष्णे वर्षति शीते वा मास्तेवातिवाभृशम् ।

न कुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वा तु शक्तितः ॥ ४० ॥

आत्मनो यदि वाऽन्येषां गृहे क्षेत्रेऽथ वा खले ।

भक्षयन्ती न कथयेत्पिबन्तं चैव वत्सकम् ॥ ४१ ॥

ये तीनों आश्रमों वाले मुखिया, यह कम से कम दश धर्मग्रन्थ विद्वानों की धर्म सभा कहाती है ॥ ३५ ॥ राजा की अनुमति में होकर प्रायश्चित्त बतावे आप ही प्रायश्चित्त का निर्णय न कर देवे ( अर्थात् प्रायश्चित्तादि धर्म व्यवस्था कारिणी विद्वत्सभा राज सभा की अनुमति से अपना काम करे ) परन्तु स्वयं प्रायश्चित्त को स्वयं भी निश्चित कर देवे ॥ ३६ ॥ यदि उन विद्वान् ब्राह्मणों का उल्लंघन करके राजा स्वयं किया चाहै तो वह पाप सौ गुणा होकर राजा को लगता है ॥ ३७ ॥ सर्व देवता के मन्दिर के आगे प्रायश्चित्त करावे । फिर वह प्रायश्चित्त कराने वाला विद्वान् भी स्वयं कुछ व्रत ( प्रायश्चित्त ) करके वेद की माता गायत्री का जप करे ॥ ३८ ॥ प्रायश्चित्त करने वाला शिखा सहित वालों का मुँह न कराके सायं प्रातः और मध्याह्न में त्रिकाल स्नान किया करे । रात्रि को गौओं के बीच गोशाला में बसे और दिन में चलने को निकली गौओं के पीछे २ जंगल में भ्रमण किया करे ॥ ३९ ॥ अत्यंत उष्णकाल ( गर्मी ) में धर्म में, शीतकाल में, और अत्यन्त प्रघन ( आंधी ) में अपनी रक्षा का उपाय तब करे जब शक्ति भर गौओं की रक्षा पहिले कर लेवे ॥ ४० ॥ अपने अथवा अन्य के घर में, खेत में अथवा खलियान में खाती हुई गौ को न स्वयं हटावे तथा न अन्य से हटाने को कहे और दूध पीते हुए बछड़े को भी किसी को न बतलावे ॥ ४१ ॥ गौओं के जल

पिबन्तीपुपिवेत्तोयं संविशन्तीषुसंविशेत् ।

पतितांपङ्कलग्नांवा सर्वप्राणैःसमुदरेत् ॥ ४२ ॥

ब्राह्मणार्थेगवार्थेवा यस्तुप्राणान्परित्यजेत् ।

मुच्यतेब्रह्महत्याया गोप्तागोब्राह्मणस्यच ॥ ४३ ॥

गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यंविनिर्दिशेत् ।

प्राजापत्यंतुयत्कृच्छ्रं विभजेत्तच्चतुर्विधम् ॥ ४४ ॥

एकाहमेकभक्ताशी एकाहंनक्तभोजनः ।

अयाचितश्चैकमहरेकाहंमारुताशनः ॥ ४५ ॥

दिनद्वयंचैकभक्तो द्विदिनंनक्तभोजनः ।

दिनद्वयमयाचीस्याद् द्विदिनंमारुताशनः ॥ ४६ ॥

त्रिदिनंचैकभक्ताशी त्रिदिनंनक्तभोजनः ।

दिनत्रयमयाचीस्यात्त्रिदिनंमारुताशनः ॥ ४७ ॥

चतुरहंत्वेकभक्ताशी चतुरहंनक्तभोजनः ।

चतुर्दिनमयाचीस्याच्चतुरहंमारुताशनः ॥ ४८ ॥

पीने पर खर्य जल पीवे, गौओं के बैठने पर खर्य बैठे और गढ़े आदि में गिरी पड़ी वा कीचड़ में फँसी गौ कों संपूर्ण बल से उठावे निकाले ॥ ४२ ॥ जो कोई मनुष्य ब्राह्मण वा गौओं की रक्षा करने के लिये अपने प्राणों को भी देकर गौ और ब्राह्मण की रक्षा करे यह ब्रह्महत्यादि महा पापों से शीघ्र ही छूट जाता है ॥ ४३ ॥ गोवध प्राप के अनुसार निम्न चतुर्विधों में से उचित प्राजापत्य व्रत बतावे । उस कृच्छ्र व्रत को चार भाग में बाँटे ॥ ४४ ॥ एक दिन प्रातःकाल, एकवार-परिमित खावे, और एक दिन रात में भोजन करे, एक दिन बिना मांगे जो मिले उसे खावे और एक दिन सर्वथा निराहार रहे यह छोटा कृच्छ्र वा पार्वकृच्छ्र व्रत है ॥ ४५ ॥ दो दिन एकवार प्रातःकाल परिमित खावे; दो दिन रात में परिमित भोजन करे, दो दिन बिना मांगे जो मिले उसे खावे, फिर दो दिन निराहार उपवास करे यह द्वितीय कक्षा का कृच्छ्र व्रत वा अर्द्ध कृच्छ्र जानो ॥ ४६ ॥ तीन दिन एकवार प्रातः खावे, तीन दिन रात में भोजन करे, तीन दिन बिना मांगे जो मिले उसे खावे फिर तीन दिन निराहार रहे यह तीसरा वा पौन कृच्छ्र व्रत है ॥ ४७ ॥ चार दिन एकवार प्रातः खावे, चार दिन रात में एक बार भोजन करे फिर चार दिन बिना मांगे जो मिले उसे खावे और चार दिन निराहार रहे यह पूरा कृच्छ्र व्रत है ( इन व्रतों में ३६-से-४२ तक श्लोकों में कहे

प्रायश्चित्ते तत्तश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।

विप्राणां दक्षिणां दद्यात्पवित्राणि जपेद्द्विजः ॥ ४९ ॥

ब्राह्मणान्भोजयित्वा तु गोघ्नः शुद्धयेन्न संशयः ॥ ५० ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

गवांसंरक्षणार्थाय न दुष्येद्गोवबन्धयोः ।

तद्वधंतु न तं विद्यात्कामाकामकृतं तथा ॥ १ ॥

दण्डादूर्ध्वयदान्येन प्रहरेद्वा निपातयेत् ।

प्रायश्चित्तं तदा प्रोक्तं द्विगुणं गोवधे चरेत् ॥ २ ॥

रोधबन्धनयोक्त्राणि घातश्चेति चतुर्विधम् ।

एकपादं चरेद्गोधे द्विपादं बन्धने चरेत् ॥ ३ ॥

योक्त्रेषु तु त्रिपादं स्याच्चरेत्सर्वं निपातने ।

गोचरे वा गृहे वापि दुर्गेष्वप्यसमस्थले ॥ ४ ॥

अनुसार वत्ताव करें ) ॥ ४८ ॥ प्रायश्चित्त के पूर्ण हुए पीछे वह द्विज ब्राह्मणादि अन्य सुपात्र ब्राह्मणों को भोजन करावे दक्षिणा देवे और पवित्र वेद-मन्त्रों ( गायत्री आदि ) को जपे ॥ ४९ ॥ ब्राह्मणों को भोजन करा कर गोवध का करने वाला शुद्ध हो जाता है इस में सन्देह नहीं है ॥ ५० ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में आठवां अध्याय पूरा हुआ ॥

गौओं की रक्षा के लिये रोकने और बांधने में यदि गौ मरजाय तो उसको गोवध नहीं जानना, चाहे वह रक्षा के उद्देश्य को लेकर रोकने बांधने की इच्छा से भी हुआ हो ॥ १ ॥ दंड से भिन्न यदि किसी औजार से गौ को मारें वा गिरा देवे तो वह गोवध में कहे से दूना प्रायश्चित्त करै ॥ २ ॥ रोकने, बंध बांधने, जोतने, और मारने से इन चार प्रकारों से गोहत्या होती है । परन्तु ये काम कष्ट पहुंचाने की इच्छा से निर्दय होकर किये गये हों तब, यदि रोकने से गोहत्या हुई हो तो एक पाद, बंधन से हुई हो तो दो पाद ॥ ३ ॥ योक्त्र से गोहत्या होने पर तीनपाद, और मारने से हुई गोहत्या में ( अ० ८ के श्लोक ४४ से ५० तक में कहा ) संपूर्ण प्रायश्चित्त करै । गौओं के चरने को रखाये बाड़ा में, घर में, दुर्ग ( जहां निकलने पड़ने का रास्ता न हो ) में और ऊंची नीची जगह में, ॥ ४ ॥ नदियों में, समुद्र में, गड्ढों में, गुफा के मुख में,

नदीष्वथसमुद्रेषु खातेष्वथदरीमुखे ।

दग्धदेशेमृतागावः स्तम्भनाद्रोधउच्यते ॥ ५ ॥

यौक्त्रदामकडारैश्च कण्ठाभरणभूषणैः ।

गृहेचापिवनेवापि बद्धास्याङ्गुलीर्मृतायदि ॥ ६ ॥

तदेवबन्धनंविद्यात्कामाकामकृतंचयत् ।

हलेवाशकटेपङ्क्तौ भारेवापीडितोनरैः ॥ ७ ॥

गोपतिर्मृत्युमाप्नोति यौक्त्रोभवतितद्वधः ।

मत्तःप्रमत्तउन्मत्तश्चेतनोवाऽप्यचेतनः ॥ ८ ॥

कामाकामकृतक्रोधो दण्डैर्हन्यादथोपलैः ।

ग्रहतावामृतावापि तद्विहेतुर्निपातते ॥ ९ ॥

अङ्गुगुष्ठमात्रस्थूलस्तु बाहुमात्रःप्रमाणतः ।

आर्द्रस्तुसपलाशश्च दण्डइत्यभिधीयते ॥ १० ॥

मूर्च्छितःपतितोवापि दण्डेनाभिहतःसतु ।

उत्थितस्तुयदागच्छेत्पञ्चसप्तदशाथवा ॥ ११ ॥

जले तपे हुए स्थान में, इन जगहों में खड़ी हुई गीओं को रोकने से रोध द्वारा मरना कहते हैं ॥ ५ ॥ यदि जुए में वा रस्सी से बांधा हो, घंटारों की रस्सी से वा आभूषण की, रस्सी से घर में वा वन में बंधी हुई गी यदि मरजाय तो ॥ ६ ॥ अवस्था, भेद से उस को, कामकृत, वा, अकामकृत हत्या कहते हैं ।, यदि हल में, वा गाड़ी में, वा दो चार बैलों की, पांति में बांधने पर, बोझा लादने पर, मनुष्यों से पीड़ा को प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ बैल मरजाय तो उस वध को यौक्त्र कहा है । जो मनुष्य मत्त, प्रमत्त, उन्मत्त, चेतन वा अचेतन दशा में हो ॥ ८ ॥ समझ कर वा बिना समझे क्रोध करके दंडों से वा पत्थरों से गी पर प्रहार करे और बड़े गी मरजाय तो उसे निपातन (मरण) का हेतु कहते हैं ॥ ९ ॥ अंगुठ भर मोटा और भुजा की बराबर लंबा, गीला और पत्तों वाला जो हो उसे दंड कहते हैं ॥ १० ॥ मूर्छा को प्राप्त हुआ, वा पड़ा हुआ वा दंड से ताड़ा हुआ वह बैल जो पांच वा सात अथवा दश पग तक उठ कर चले ॥ ११ ॥ अथवा एक प्रास, खाले वा जल पीले वा पहिले से उस को कोई

ग्रासंवायदिगृह्णीयात्तोयंवापिपिबेद्यदि ।

पूर्वव्याध्युपसृष्टश्चेत्प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ १२ ॥

पिण्डस्थेपादमेकं तु द्वीपादौ गर्भसंमिते ।

पादोनं व्रतमुद्दिष्टं हत्वा गर्भमचेतनम् ॥ १३ ॥

पादेऽङ्गरोमवपनं द्विपादेशमश्रुणोऽपि च ।

त्रिपादे तु शिखावर्जं सशिखं तु निपातने ॥ १४ ॥

पादे वस्त्रयुगंचैव द्विपादेकांस्थभाजनम् ।

त्रिपादे गोवृषदद्याच्चतुर्थे गोद्वयं स्मृतम् ॥ १५ ॥

निष्पन्नसर्वगात्रेषु दृश्यते वा सचेतनः ।

अङ्गप्रत्यङ्गसंपूर्णो द्विगुणं गोव्रतं चरेत् ॥ १६ ॥

पाषाणेनैव दण्डेन गावो येनाभिघातिताः ।

श्रृङ्गमङ्गे चरेत्पादं द्वीपादौ नेत्रघातने ॥ १७ ॥

लाङ्गूले पादकृच्छ्रं तु द्वीपादावस्थिभञ्जने ।

त्रिपादं चैव कर्णे तु चरेत्सर्वं निपातने ॥ १८ ॥

रोग भी हो तो ऐसी हिंसा का प्रायश्चित्त नहीं है ॥ १२ ॥ यदि गोलाका पिंडी मात्र बने गर्भ को गिरावे तो पाद कृच्छ्र व्रत, कुछ २ गर्भ का आकार बनजाने पर गर्भपात कराने में आधा कृच्छ्र व्रत, और ठीक २ बने अचेतन गर्भ को गिरावे तो पौन कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ( यहाँ मारने पीटने से गिरे पशु गर्भ का प्रायश्चित्त जानो ) ॥ १३ ॥ पादकृच्छ्र प्रायश्चित्त में शरीर के रोम मुंडावे, आधे कृच्छ्र व्रत में डाढ़ी मूँछें भी मुंडावे त्रिपाद ( पौन ) व्रत में शिखा को छोड़कर मुंडावे और पूरे कृच्छ्र व्रत में शिखा सहित धालों को मुंडावे ॥ १४ ॥ चौथाई व्रत में दो बख, आधे व्रत में कांसे का पात्र, त्रिपाद ( पौन ) व्रत में एक बैल, और चौथे पूर्ण प्रायश्चित्त में दो गौ दक्षिणा देवे ॥ १५ ॥ यदि सब अंग जिस के बन गये हों ऐसा अंग प्रत्यंगों सहित पूरा २ चेतन गर्भ दीखता हो तो उस के गिराने में पूर्व कहे गोवध के प्रायश्चित्त से दूना प्रायश्चित्त करे ॥ १६ ॥ पत्थर वा दंड से जिसने गौ को ताड़ना की हो उस से यदि सींग टूट जाय तो पाद व्रत और नेत्र फूट जाय तो आधा कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ १७ ॥ पूंछ टूट जावे तो चौथाई व्रत, हाड़ टूट जाय तो आधा व्रत, कान टूट जाय तो तीन पाद ( पौन ) व्रत और उस पशु को मरजाने पर संपूर्ण प्रायश्चित्त करे ॥ १८ ॥ सींग टूटने पर, वा गोड़

शृङ्गभङ्गेऽस्थिभङ्गे च कटिभङ्गे तथैव च ।  
 यदि जीवति पण्मासान् प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ १९ ॥  
 व्रणभङ्गे च कर्तव्यः स्नेहाभ्यङ्गस्तु पाणिना ।  
 यवसश्चोपहर्तव्यो यावद्दृढबलो भवेत् ॥ २० ॥  
 यावत्संपूर्ण सर्वाङ्गस्तावत्तपोषयेन्नरः ।  
 गोरूपं ब्राह्मणस्याग्रे नमस्कृत्वा विसर्जयेत् ॥ २१ ॥  
 यद्यसंपूर्ण सर्वाङ्गो हीनदेहो भवेत्तदा ।  
 गोघातकस्य तस्याहुं प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ २२ ॥  
 काष्ठलोष्टकपाषाणैः शस्त्रेणैवोद्धृतो बलात् ।  
 व्यापादयति यो गां तु तस्य शुद्धिं विनिर्दिशेत् ॥ २३ ॥  
 चरेत्सांतपनं काष्ठे प्राजापत्यं तु लोष्टके ।  
 तप्तकृच्छ्रं तु पाषाणे शस्त्रं चैवाति कृच्छ्रकम् ॥ २४ ॥  
 पञ्चसान्तपने गावः प्राजापत्ये तथा त्रयः ।  
 तप्तकृच्छ्रे भवन्त्यष्टावति कृच्छ्रे त्रयोदश ॥ २५ ॥

आदि का हाड़ टूटने पर, छः महीने तक जीवित रहे तो प्रायश्चित्त नहीं है अर्थात् १९  
 १८ श्लोकों में कहे प्रायश्चित्त सींगादि टूटने पर छः महीने से पहिले पशु के मरने पर  
 जानो ॥ १९ ॥ यदि बैलादि के घाव हो जाय तो हाथ से उस घाव पर तैलादि दवा  
 लगाय करे और जब तक बैल बलवान् न हो तब तक घास खिलाया करे काम कुछ  
 न लेवे ॥ २० ॥ जब तक ठीक घाव पूरा होके दृष्ट पुष्ट न हो जाय तब तक मनुष्य उस  
 का पोषण करे । फिर गौ रूप बैल को ब्राह्मण के आगे नमस्कार करके छोड़ देवे  
 ॥ २१ ॥ यदि उस बैल का कोई अंग ठीक अच्छा न हो किन्तु लूला लंगड़ा ही रहे और  
 हीनदेह ( दुबला ) हो जाय तो गौ के मारने वाले को कहे से आधा प्रायश्चित्त बतावे  
 ॥ २२ ॥ यदि लकड़ी, ढेला, पत्थर, वा किसी हथियार से बल पूर्वक मारा हुआ बैल  
 मरजावे तो उस का निम्न लिखित प्रायश्चित्त जानो ॥ २३ ॥ लकड़ी से मरने पर कृच्छ्र-  
 सान्तपन, ढेला से मरने पर प्राजापत्य, पत्थर से मरने पर तप्तकृच्छ्र, और हथियार  
 ( वहाँ भालादि ) से मरने पर अतिकृच्छ्र व्रत करे ॥ २४ ॥ सान्तपन में पांच, प्राजा-  
 पत्य में तीन, तप्त कृच्छ्र में आठ और अतिकृच्छ्र व्रत करने में तेरह गौ दक्षिणा देवे

प्रमाणे प्राणभृतां दद्यात्तत्प्रतिरूपकम् ।  
 तस्यानुरूपमूल्यं वा दद्यादित्यब्रवीन्मनुः ॥ २६ ॥  
 अन्यत्राङ्कनलक्ष्मभ्यां वह्नेमोचने तथा ।  
 सायंसंगोपनार्थं च नदुष्येद्रोधबन्धयोः ॥ २७ ॥  
 अतिदाहेऽतिवाहे च नासिकाभेदेन तथा ।  
 नदीपर्वतसंचारे प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ २८ ॥  
 अतिदाहे चरेत्पादं द्वीपादीवाहने चरेत् ।  
 नासिक्ये पादहीनं तु चरेत्सर्वनिपातने ॥ २९ ॥  
 दहनात्तु विपद्येत अनङ्गवान्योक्त्रयन्त्रितः ।  
 उक्तं पराशरेणैव ह्येकपादं यथाविधि ॥ ३० ॥  
 रोधनबन्धनंचैव मारः प्रहरणं तथा ।  
 दुर्गप्रेरणयोक्त्रं च निमित्तानिवधस्य षट् ॥ ३१ ॥

॥ २५ ॥ प्राणियों के मारने पर उन २ की प्रतिमा सुवर्ण की बनवा के दान करे अथवा उस २ प्राणी का जितना जितना उचित मूल्य हो उतना दान करे यह बात मनु जीनें कही है ॥ २६ ॥ खांसी के नामसे (अङ्कित करने) वा चिह्न लगाने, जोतने तथा छोड़नेमें और सायंकाल रात्रि में रक्षा करने के लिये रोकने बांधने में गौओं को जो कुछ कष्ट हो वा कोई गौ दैवयोग से मर भी जाय तो दोष नहीं लगेगा ॥ २७ ॥ दाग देने में अत्यन्त जलाने, वा बहुत काल तक सख्ती से हलादि में जोतने पर, नाथने में और नदी में घुसाने तथा पर्वत पर चढ़ाने पर यदि बैल मर जाय तो निम्न लिखित प्रायश्चित्त जानो ॥ २८ ॥ दागने से मरने पर चौथाई, जोतने से मरने पर आधा, नाथने से मरने पर पौना और नदी पर्वत पर घुसाने चढ़ाने से मरने पर पूरा सान्त्वन कृच्छ्र प्रायश्चित्त करे ॥ २९ ॥ यदि रस्सी से बांधे हुए बैल को गिरा कर दाग देने मात्र से मर जावे तो महर्षि पराशर की सम्मत्यनुसार चौथाई प्रायश्चित्त करे ॥ ३० ॥ रोकना बांधना, बोझालादना, लकड़ी आदिसे मारना पीटना, किसी कठिन जगह नदी आदि में घुसाना वा चढ़ाना, और नाथ डालने आदि के लिये गिराने को रस्सी आदि से बांधना इन छः निमित्तों से बैल आदि पशु की हिंसा होती है ॥ ३१ ॥ खूंट पर

बन्धपाशसुगुप्ताङ्गो म्रियते यदि गोपशुः ।  
 भुवनेतस्य नाशस्य पापे कृच्छ्राद्धमर्हति ॥ ३२ ॥  
 न नारिकेलैर्न च शाण्वा लैर्न चापि मीक्षैर्न च बलकशृङ्गलैः ।  
 एतैस्तु गावो न निबन्धनीया बद्ध्वा तु तिष्ठेत्परशुं गृह्णीत्वा ॥ ३३ ॥  
 कुशैः काशैश्च बध्नीयाद्गोपशुं दक्षिणामुखम् ।  
 पाशलग्नाग्निदग्धेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ ३४ ॥  
 यदितत्र भवेत्काण्डं प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ।  
 जपित्वा पावनीं देवीं मुच्यते तत्र किल्बिषात् ॥ ३५ ॥  
 प्रेरयन् कूपवापीषु वृक्षच्छेदेषु पातयन् ।  
 गवाशनेषु विक्रीणस्ततः प्राप्नोति गोबधम् ॥ ३६ ॥  
 आराधितस्तु यः कश्चिद् भिन्नकक्षो यदा भवेत् ।  
 श्रवणं हृदयं भिन्नं मग्नीं वा कूपं संकटे ॥ ३७ ॥

बांधा हुआ रस्ती की फांसी लग कर यदि बैल मर जावे । तब घर में उस बैल के नाश का पाप लगने पर आधा कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ ३२ ॥ नारियल की, शाण की, बालों की, मूँज की, तथा बकल की रस्ती से और लोहे की सांकल से इन सब से गौ बैल को नहीं बांधना चाहिये । यदि कदाचित् इन से बांधे तो हाथ में फरसा लिये गौ के समीप रक्षार्थ खड़ा रहे ॥ ३३ ॥ किन्तु कुशों तथा कांसों की रस्ती से दक्षिण को मुख करके गौ को बांधे । कुशादि की रस्ती से रक्षार्थ बांधने पर फांसी लग जाय वा अग्नि लग कर गौ बैल जल जाय तो प्रायश्चित्त नहीं करने पड़ेगा क्योंकि बांधने वाले का दोष नहीं है ॥ ३४ ॥ यदि वहाँ सरपता का ढेर लगा हो और उसमें अग्नि लग कर गौ जल जावे तो प्रायश्चित्त कैसे हो ? इस का उत्तर यह है कि वहाँ जगत्पावनी गायत्री का जप करके उस पाप से छूट जाता है ॥ ३५ ॥ कुआँ वा बाउली में घुसाने की प्रेरणा करता हुआ, कटे हुए पड़े वृक्षों पर घेर २ कर गिराते हुए गौ मर जावे वा गोमक्षक कसाई आदिके हाथ बेचने पर गोहत्या संगती है । कसाई कहने से मुसलमानों का ही अंश नहीं किन्तु भारतमें भी गोहिंसकों का भक्षक नीच जातियाँ पहिले से विद्यमान थीं ॥ ३६ ॥ यदि उक्त हालत में गौ के बचाने का उपाय करने पर भी उस की कोख फट जाय, कान टूट जाय, हृदय फट जाय, वा कुप में डूब कर मर जाय ॥ ३७ ॥ अथवा कुप पर इधर से उधर फंदाने से भी उस बैल की ग्रीवा वा

कूपोदुत्क्रमणेचैव भग्गोवाग्रीवपादयोः ।

सएवमियतेतत्रत्रीन्पादांस्तुसमाचरेत् ॥ ३८ ॥

कूपखातेतटीवन्धे नदीवन्धेप्रपासुच ।

पानीयेषुविपन्नानां प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ३९ ॥

कूपखातेतटीखाते दीर्घखातेतथैवच ।

अन्येषुधर्मखातेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४० ॥

वेश्मद्वारेनिवासेषु योनरःखातमिच्छति ॥

स्वकार्येगृहखातेषु प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥

निशिबन्धनिरुद्धेषु सर्पव्याघ्रहतेषुच ।

अग्निविद्युद्विपन्नानां प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४२ ॥

ग्रामघातेशरीरेण वेश्मबन्धनिपातने ।

अतिवृष्टिहतानां च प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४३ ॥

संग्रामेऽपहतानां च येदग्धावेश्मकेषुच ।

दावाग्निग्रामघातेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४४ ॥

टांग दूह जावे और इसी कारण यदि वह मर जाय तो त्रिपाद (तीन हिस्सा) ।  
कुछ सान्त्वन मत प्रायश्चित्त करे ॥ ३८ ॥ कुप, गढ़े, वा-पोखरेमें, बांधपर, नदीमें,  
प्याऊमें पानी पिलाते समय यदि गौ वा बैल मरजावे तो प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥ ३९ ॥  
कुप के समीप खोदे हुए गढ़े में, नदी के गढ़े में वा बहुत काल से खोदे हुए गढ़े में,  
अथवा धर्मार्थ खोदे हुए तालाब आदि में जल पिलाने को घुसाये गौ वा बैल के मर  
जाने पर भी प्रायश्चित्त नहीं लगता है ॥ ४० ॥ घरके द्वार पर, गोशाला में, वा अपने  
किसी प्रयोजन से घर के भीतर कोई गढ़ा खोदा हो और उन में गिर कर यदि गौ वा  
बैल मर जावे तो यथोचित प्रायश्चित्त करे ॥ ४१ ॥ रक्षा के लिये रात्रि में बांधने वा  
रोकने पर यदि संप काट ले, अथवा बाघ आदि जानवर मार डाले, अथवा आग  
लग जाय अथवा बिजली गिरकर मरजाय तो प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥ ४२ ॥ गाँव  
में लूट हो डांका पड़े और अनेक बाण चलने से गोहत्या हो, वा घर की भीत गिर  
जाने से मरे अथवा अत्यन्त वर्षा होने से गौ वा बैल मरे उनका भी प्रायश्चित्त नहीं  
लगेगा ॥ ४३ ॥ युद्ध के समय पर, घर में अग्नि लगजाने पर, वन के अग्नि से, अथवा  
गाँव के नष्ट होने पर जो गौ मरजावे, उनका प्रायश्चित्त किसी को नहीं लगेगा ॥ ४४ ॥

यन्त्रितागौश्रिकित्सार्थं मूढगर्भविमोचने ।

यत्नेकृतेविप्रद्येत प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ ४५ ॥

व्यापन्नानांबहूनांच रोधनेबन्धनेपिवा ।

मिषह्मिध्याप्रचारेण प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ ४६ ॥

गोवृषाणां विपत्तौ च यावन्तः प्रेक्षकाजनाः ।

अनिवारयतां तेषां सर्वेषां पातकं भवेत् ॥ ४७ ॥

एकोहतोयैर्बहुभिः समेतैर्न ज्ञायते यस्य हतोभिघातात् ।

दिव्येन तेषामुपलभ्यहन्ता, निवर्त्तनीयो नृपसन्नियुक्तः ॥ ४८ ॥

एकाचेद्वयहुभिः काचिद्वैवाहव्यापादिताक्वचित् ।

पादं पादं तु हत्यायाश्चरेयुस्ते पृथक् पृथक् ॥ ४९ ॥

हतेतुरुधिरंदृश्यं व्याधिग्रस्तः कृशो भवेत् ।

ग्रासार्थं चोदितो वापि अध्वानं नैव गच्छति ।

यदि औषध करने के लिये गौ को रस्सी से बांध कर गिराने से, और अटके हुए गर्भ को निकालने से उपाय करने पर भी गौ मरजाय तो गोहत्या का दोष नहीं लगेगा ॥ ४५ ॥ यदि बहुत गौ आदि पशुओं को एक साथ थोड़ी जगह में रोकने वा बांधने पर अनेक गौ मर जावें । अथवा वैद्य डाक्टरादि को विरुद्ध हानिकारक दी औषधि से भी मरजावे तो प्रायश्चित्त यथोचित करना चाहिये ॥ ४६ ॥ जहां गौ वा बिल मार पीटे वा बंध किये जाते हैं तब जितने देखने वाले ब्राह्मणादि सनातनधर्मी देखते रहें वा सुनते जानते रहें और गोहत्या का निवारण न करें तो गोहत्या का पाप सब को लगता है ॥ ४७ ॥ एक मनुष्य वा पशु को इकट्ठा हुए बहुतों ने मारा हो पर यह न जान पड़े कि किस की चेष्ट से मारा गया तो वहां अग्नि को गोला हाथ पर रखने आदि दिव्य उपाय से अपराधी को जानकर राजकर्मचारी अन्यो को अपराध से निवृत्त करें ॥ ४८ ॥ यदि एक गौ को बहुत मनुष्यों ने मिलकर मारा हो तो हत्या का चौथाई २ प्रायश्चित्त सब करें ॥ ४९ ॥ कोई बैल मारा पीटा गया हो तो रुधिर निकलने से, वा रोग से दुर्बल हो जावे, वा दाना घास आदि खिलाने पर भी न खावे वा मार्ग में हांकने पर भी न बले और फेन गिरावे तो जान लें कि बैल को किसीने मारा पीटा

लालाभवतिदृष्टेषु एवमन्वेषणं भवेत् ॥ ५० ॥  
 मनुना चैवमेकेन सर्वशास्त्राणि जानता ।  
 प्रायश्चित्तं तु तेनोक्तं गोघ्नश्चन्द्रायणं चरेत् ॥ ५१ ॥  
 केशान्तरक्षणार्थाय द्विगुणं व्रतमाचरेत् ।  
 द्विगुणे व्रतआदिष्टे दक्षिणा द्विगुणा भवेत् ॥ ५२ ॥  
 राजा वाराजपुत्रो वा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः ।  
 अकृत्वा वपनं तेषां प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ ५३ ॥  
 यस्य न द्विगुणन्दानङ्केशश्च परिरक्षितः ।  
 तत्पापं तस्य तिष्ठेत् वक्ता च न रक्तं व्रजेत् ॥ ५४ ॥  
 यत्किञ्चित् क्रियते पापं सर्वकेशेषु तिष्ठति ।  
 सर्वान् केशान्समुद्धृत्य छेदयेदङ्गुलद्वयम् ॥ ५५ ॥  
 एवं नारी कुमारीणां शिरसो मुण्डनं स्मृतम् ।  
 न स्त्रियाः केशवपनं न दूरे शयनासनम् ॥ ५६ ॥

है ॥ ५० ॥ धर्म शास्त्रों का मर्म जानने वाले एक मनुजी ने गोहत्या करने वाले को चान्द्रायण व्रत प्रायश्चित्त कहा है ॥ ५१ ॥ यदि कोई मनुष्य प्रायश्चित्त में शिर के बाल न मुंडाना चाहे तो उसे दूना प्रायश्चित्त व्रत करना चाहिये । और उस में दक्षिणा भी द्विगुणी देनी चाहिये ॥ ५२ ॥ ऐसे द्विगुण प्रायश्चित्त करने वालों को राजा, वा राजपुत्र अथवा बहुत शास्त्रों को जानने वाला ब्राह्मण विद्वान् प्रायश्चित्त करावे ॥ ५३ ॥ जो अपराधी शिर के बाल न मुंडावे और दक्षिणा भी दूनी न देवे उस का पाप प्रायश्चित्त से निवृत्त नहीं होता किन्तु पाप वैसा ही बना रहता है । और प्रायश्चित्त बताने वा कराने वाले को भी नरक होता है ॥ ५४ ॥ जो कुछ पाप किया जाता है वह सब वालों में ठहरता है । इस लिये जो कोई प्रायश्चित्ती केश न मुंडाना चाहे वह भी शिर के सब बालों को इकट्ठा करके ऊपर से दो अंगुल पुल्ला कटा देवे ॥ ५५ ॥ यदि स्त्री वा कुमारी कन्या को किसी अपराध में प्रायश्चित्त करना पड़े तो स्त्री के शिर के बाल न मुंडावे किन्तु सब बाल इकट्ठा करके ऊपर से दो अंगुल कटवा देवे । और प्रायश्चित्तके लिये स्त्री अपने घरसे दूर कहीं एकान्तमें अकेली न सोवे न निवास करे ॥ ५६ ॥

नद्यगोष्ठेवसेद्रात्रौ नदिवागाअनुव्रजेत् ।  
 नदीपुसंगमेचैव अरण्येषुविशेषतः ॥ ५७ ॥  
 नस्त्रीणामजिनंवासो व्रतमेवंसमाचरेत् ।  
 त्रिसंध्यंस्नानमित्युक्तं सुराणामर्चनंतथा ॥ ५८ ॥  
 बन्धुमध्येव्रतंतासां कृच्छ्रचान्द्रायणादिकम् ।  
 गृहेषुसततंतिष्ठेच्छुचिर्निग्रममाचरेत् ॥ ५९ ॥  
 इहयोगोवधंकृत्वा प्रच्छादयितुमिच्छति ।  
 सयातिनरकंधोरं कालसूत्रमसंशयम् ॥ ६० ॥  
 विमुक्तोत्तरकात्तस्मान्मर्त्यलोकेप्रजायते ।  
 क्लीबोदुःखीचकुष्ठीच सप्तजन्मानिवैनरः ॥ ६१ ॥  
 तस्मात्प्रकाशयेत्पापं स्वधर्मसततंचरेत् ।  
 स्त्रीबालभृत्यगोविप्रेष्वतिकोपंविबर्जयेत् ॥ ६२ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

प्रायश्चित्त के समय स्त्री रात को गोशाला में भी न बसे, न दिन में गौभी के पीछे २ जंगल में जावे, नदियों में तथा नदी के संगम पर भी स्नान को अकेली न जावे और एकान्त धन में भी न रहे ॥ ५७ ॥ प्रायश्चित्त में स्त्रियों के लिये मृग चर्म धारण का भी निषेध है किन्तु स्त्री तीन बार स्नान करे और देवताओं की प्रतिमाओं का पूजन करती हुई प्रायश्चित्त व्रत पूरा करे ॥ ५८ ॥ स्त्रियों को भाई बन्धों के बीच अपने घर में कृच्छ्र चान्द्रायणादि व्रत करना उचित है । निरन्तर अपने घर में ही रहे और शुद्धि आदि के नियमों का पालन ब्रह्मचर्य रखती हुई करे ॥ ५९ ॥ इस जगत् में जो कोई पुरुष गोवध करके छिपाना चाहता है वह अवश्यमेव कालसूत्र नामक घोर नरक को प्राप्त होता है इस में कुछ सन्देह नहीं है ॥ ६० ॥ वह गोहंसक पुत्र उस नरक से छूटने पर मनुष्य लोक में जन्म लेता है । तब सात जन्मों तक नपुंसक तथा कोढ़ी होता हुआ अनेक बड़े २ कठिन दुःख पाता है । इस से गोहत्या बच पड़े तो उसे न छिपा कर प्रायश्चित्त अवश्य करे ॥ ६१ ॥ तिस से गोहत्यादि पाप को प्रकाशित करे और अपना धर्म निरन्तर करे । स्त्री, बालक, अपना दास, गौ और ब्राह्मणों पर अत्यन्त क्रोध कदापि न करे ॥ ६२ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में नवम अध्याय पूरा हुआ ॥

चातुर्वर्ण्येषु सर्वेषु हितांवक्ष्यामि निष्कृतिम् ।  
 अगम्यागमने चैव शुद्धौ चान्द्रायणं चरेत् ॥ १ ॥  
 एकैकं ह्रासयेद्ग्रासं कृष्णशुक्ले च वर्द्धयेत् ।  
 अमावास्यां न भुञ्जीत ह्येष चान्द्रायणे विधिः ॥ २ ॥  
 कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु ग्रासं वै परिकल्पयेत् ।  
 अन्यथाभावदुष्टस्य न धर्मो न च शुद्धयति ॥ ३ ॥  
 प्रायश्चित्ते ततश्चोर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।  
 गोद्वयं वस्त्रयुग्मं च दद्याद्विघ्नेषु दक्षिणाम् ॥ ४ ॥  
 चाण्डालीं वा श्वपाकीं वा अनुगच्छति यो द्विजः ।  
 त्रिरात्रमुपवासी स्याद् विप्राणामनुशासनात् ॥ ५ ॥  
 स शिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्यद्वयं चरेत् ।  
 ब्रह्मकूर्चं ततः कृत्वा कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ॥ ६ ॥

सब ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये हितकारी प्रायश्चित्त इस अगले दशवें अध्याय में हम कहेंगे । अगम्या स्त्री के साथ गमन करने पर शुद्धि के लिये चान्द्रायण व्रत करे ॥ १ ॥ जिस मास में चान्द्रायण करे तब पौर्णमासी को १५ ग्रास खाकर कृष्ण प्रतिपदा से एक २ ग्रास घटाया जाय फिर अमावस्या को कुछ न खावे निराहार रहे फिर शुक्ल प्रतिपदा को एक द्वितीया को दो ग्रास खावे ऐसे ही प्रति दिन एक २ घंटा के पौर्णमासी को फिर १५ ग्रास खावे यही चान्द्रायण का विधान है ॥ २ ॥ मुरगा के अण्डा के बराबर एक ग्रास का परिमाण जानो । जिस का मन छल कपटदि से दूषित हो वह धर्म करने योग्य नहीं और न उस की प्रायश्चित्तों से शुद्धि होती है ॥ ३ ॥ प्रायश्चित्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे । तथा दो गौ और दो वस्त्र ब्राह्मणों को दक्षिणा में देवे ॥ ४ ॥ चाण्डाली वा डौमिनी स्त्री से जो ब्राह्मण समागम करे वह ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर प्रथम तीन दिन रात उपवास करे ॥ ५ ॥ फिर शिखा सहित शिर के बाल मुंडा के दो प्राजापत्य व्रत करे । तदनन्तर ब्रह्मकूर्च व्रत करके ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ६ ॥ नित्य गायत्री का जप किया करे । दो गौ दो बैल

गायत्रीचजपेन्नित्यं दद्याद्गोमिथुनद्वयम् ।  
 विप्रायदक्षिणांदद्याच्छुद्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ७ ॥  
 क्षत्रियोवाऽथवैश्योवा चाण्डालीं गच्छतो यदि ।  
 प्राजापत्यद्वयंकुर्याद् दद्याद्गोमिथुनंतथा ॥ ८ ॥  
 श्वपाकीमथचाण्डालीं शूद्रोवैयदि गच्छति ।  
 प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं चतुर्गोमिथुनंददेत् ॥ ९ ॥  
 मातरं यदि गच्छेत्तु भगिनीं स्वसुतांतथा ।  
 एतास्तु मोहितो गत्वा त्रीणि कृच्छ्राणि संचरेत् ॥ १० ॥  
 चान्द्रायणत्रयंकुर्याच्छिश्नच्छेदेन शुद्ध्यति ।  
 मातृप्त्रसृगमेचैव आत्ममेढ्रनिकृन्तनम् ॥ ११ ॥  
 अज्ञानेन तु योगच्छेत्कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ।  
 दशगोमिथुनंदद्याच्छुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् ॥ १२ ॥  
 पितृदारान्समारुह्य मातुराप्तांच भ्रातृजाम् ।  
 गुरुपत्नीस्नुषांचैव भ्रातृभार्यांतथैव च ॥ १३ ॥

ब्राह्मण को दक्षिणा में देवे तो इतने प्रायश्चित्त से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है ॥ ७ ॥  
 क्षत्रिय वा वैश्य पुरुष यदि चाण्डाली से गमन करें तो दो प्राजापत्य व्रत करके एक  
 गो एक बल दक्षिणा में देवे और ब्रह्मभोज करावे ॥ ८ ॥ डोमिनी वा चाण्डाली को  
 साथ यदि शूद्र पुरुष गमन करे तो एक प्राजापत्य कृच्छ्र व्रत करे और चार गौ चार  
 बल दक्षिणा देवे ॥ ९ ॥ माता, भगिनी, तथा अपनी पुत्री से जो पुरुष मोहाधानग्रस्त  
 हो के गमन करे तो तीन कृच्छ्रव्रत करे ॥ १० ॥ फिर तीन चान्द्रायण व्रत तीन मास  
 तक करे तब शिश्न ( लिङ्ग इन्द्रिय ) को काट डालने पर शुद्ध होता है । और मातृ-  
 श्रसा ( मौसी ) से गमन करने पर भी अपने इन्द्रिय का छेदन करे काट डाले ॥ ११ ॥  
 और यदि अज्ञान से ऐसा पूर्वोक्त काम करे तो दो मास तक दो चान्द्रायण व्रत करे  
 और दश गौ दश बल दक्षिणा में देवे । यह शुद्धि महर्षि पाराशर ने कही है ॥ १२ ॥ जो  
 पुरुष पिता की अन्य किसी स्त्री ( जो अपनी उत्पादिका माता न हों ) से गमन करे  
 वा माता की संगी भतीजी से गमन करे वा गुरुपत्नी, पुत्रवधू, भ्रातृ जाया  
 ( भौज—भावज ) से गमन करे ॥ १३ ॥ तथा माता की भावज और अपने गोत्र की

मातुलानींसगोत्रांच प्राजापत्यत्रयंचरेत् ।  
 गोद्वयंदक्षिणांदत्त्वा मुच्यतेनात्रसंशयः ॥ १४ ॥  
 पशुवेश्यादिगमने महिष्युष्ट्रचौकपीतथा ।  
 खरीचशूकरींगत्वा प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ १५ ॥  
 गोगामीचत्रिरात्रेण गामेकांब्राह्मणेददेत् ।  
 महिष्युष्ट्रीखरीगामी त्वहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ १६ ॥  
 डामरेसमरेवाऽपि दुर्भिक्षेवाजनक्षये ।  
 वन्दिग्राहेभयात्तोवा सदास्वर्चीनिरीक्षयेत् ॥ १७ ॥  
 चाण्डालैःसहसंपर्कं यानारीकुरुतेततः ।  
 विप्रान्दशावरान्कृत्वा स्वकंदोषंप्रकाशयेत् ॥ १८ ॥  
 आकण्ठसंमितेकूपे गोमयोदककर्द्वमे ।  
 तत्रस्थित्वानिराहारा त्वहोरात्रेणनिष्क्रमेत् ॥ १९ ॥  
 सशिखंवपनंकृत्वा भुञ्जीयाद्यावकौदनम् ।  
 त्रिरात्रमुपवासित्वा त्वेकरात्रंजलेवसेत् ॥ २० ॥

किसी भी स्त्री से गमन करे तो तीन प्राजापत्य व्रत करे । और दो गौ दक्षिणा में देवे तो निःसन्देह पाप से छूट जाता है ॥ १४ ॥ किसी पशु बकरी आदि के साथ तथा वेश्या के साथ गमन करे वा भैंस उंटिनी, बंदरी, गधी, और सूकरी इन सब के साथ मैथुन करने पर प्राजापत्य व्रत करे ॥ १५ ॥ यदि कोई गऊ से गमन करे तो तीन उपवास करे और एक गौ ब्राह्मण को दान करे । भैंस, उंटिनी, और गधी से गमन करने वाला एक दिन रात व्रत करने पर शुद्ध होता है ॥ १६ ॥ डामर ( महा पीड़ा ) संग्राम, दुर्भिक्ष, मनुष्यों का नाश, जेलखाना, भय से पीड़ा होने पर इन सब अवसरों में सदा अपनी स्त्री की रक्षा का ध्यान रखे विस्मरण न करे ॥ १७ ॥ जो स्त्री चाण्डालों के साथ मैथुन से संसर्ग सहवास कई दिन तक करे तो वह कम से कम दश ब्राह्मणोंसे अपना दोष प्रकाशित करे ॥ १८ ॥ फिर किसी कुएँमें कण्ठ तक गहरा गोबर जल कीचड़ मिलाके भरे, उस कीचड़में एक दिन रात निराहार खड़ी रहने बाद निकले ॥ १९ ॥ फिर शिखा सहित सब बाल मुँडाके कुलथी और भात खावे । फिर तीन दिन

शंखपुष्पीलतामूलं पत्रं वा कुसुमं फलम् ।  
 सुवर्णं पञ्चगव्यं च क्वाथयित्वा पिबेज्जलम् ॥ २१ ॥  
 एकभक्तं चरेत्पश्चाद्यावत्पुष्पवती भवेत् ।  
 व्रतं चरति तद्यावत्तावत्संवसते वहिः ॥ २२ ॥  
 प्रायश्चित्ते ततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।  
 गौद्वयं दक्षिणां दद्याच्छुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् ॥ २३ ॥  
 चातुर्वर्ण्यस्य नारीणां कृच्छ्रं चान्द्रायणव्रतम् ।  
 यथाभूमिस्तथानारी तस्मात्तान्तुदूषयेत् ॥ २४ ॥  
 व्रन्दिग्राहेण याभुक्ता हत्वा यद्दुष्वायलाद्भुयात् ।  
 कृत्वा सांतपनं कृच्छ्रं शुद्ध्येत्पाराशरोऽब्रवीत् ॥ २५ ॥  
 सकृद्भुक्ता तु यानारी नेच्छन्ती पापीकर्मभिः ।  
 प्राजापत्येन शुद्ध्येत् ऋतुप्रसवणेन च ॥ २६ ॥

दिन रात उपवास करके एक दिन रात जल के भीतर बसे ॥ २० ॥ फिर शंखाहली  
 घास की जड़, पत्ते, फूल वा फलों को और सुवर्ण तथा पञ्चगव्य इन सब का काढ़ा  
 बनाकर जल पीवे ॥ २१ ॥ फिर जब तक रजस्वला हो तब तक एकवार भोजन करे  
 भूमि पर सोवे । और जब तक इस व्रत को करे तब तक घर से पृथक् बरके किसी  
 भाग में बसे ॥ २२ ॥ फिर प्रायश्चित्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे और दो  
 गौ दक्षिणा में देवे यह शुद्धि महर्षि पराशर ने कही है ॥ २३ ॥ चारो वर्ण की स्त्रियों  
 के लिये दोप लगने पर कृच्छ्रचान्द्रायणव्रत प्रायश्चित्त है क्योंकि स्त्री भूमि के समान है  
 इस से वह सर्वथा त्याज्य नहीं होती है ॥ २४ ॥ यदि किसी पुत्र ने मारपीट कर वा  
 बांधकें वा मारडालने का भय दिखाकर वा जबरदस्ती से हाथ पांव बांध कर स्त्री से  
 दुराचार किया हो तो वह स्त्री सान्त्पन कृच्छ्र व्रत करके शुद्ध होती है यह पाराशर  
 जी ने कहा है ॥ २५ ॥ पापकर्मी व्यभिचारियों ने जिस इच्छा न रखती हुई शुद्ध स्त्री  
 से एकवार दुराचार किया हो वह प्रजापत्य व्रत करने और रजस्वला होने से शुद्ध  
 होती है ॥ २६ ॥ जिस द्विज की स्त्री मद्य पीती है उसका आधा अङ्ग पतित हो जाता

पतत्यर्द्धशरीरस्य यस्यभार्यासुरांपिबेत् ।  
 पतितार्द्धशरीरस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥ २७ ॥  
 गायत्रीजपमानस्तु कृच्छ्रं सांतपनंचरेत् ॥ २८ ॥  
 गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिकुशोदकम् ।  
 एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रं सांतपनंस्मृतम् ॥ २९ ॥  
 जारेणजनयेद्गर्भं मृतेत्यक्तेगतेपतौ ।  
 तांत्यजेदपरेराष्ट्रे पतितांपापकारिणीम् ॥ ३० ॥  
 ब्राह्मणींतु यदागच्छेत्परपुंसासमन्विता ।  
 सातुनष्टाविनिर्दिष्टा नतस्यागमनंपुनः ॥ ३१ ॥  
 क्रामान्मोहाञ्ज्यागच्छेत्त्यक्त्वावन्धून्सुतान्पतिम् ।  
 साऽपिनष्टापरेलोके मानुषेषुविशेषतः ॥ ३२ ॥  
 मदमोहगतानारी क्रोधादृण्ढादिताडिता ।  
 अद्वितीयंगताचैव पुनरागमनंभवेत् ॥ ३३ ॥

है । और जिस का आधा शरीर पतित हो गया उसका यद्यपि कोई प्रायश्चित्त नहीं है ॥ २७ ॥ तथापि गायत्री को जपता हुआ कृच्छ्र सांतपन व्रत करे ॥ २८ ॥ गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, और कुश पीसकर निकाला जल इन सब को मिला कर एकदिन खावे और एकदिन उपवास करे तो यह कृच्छ्र सांतपन व्रत कहाता है ॥ २९ ॥ जो स्त्री अपने पति के त्याग देने पर, पति के कहीं चले जाने पर, वा पतिके मरजाने पर, अन्य जार पुरुष से व्यभिचार द्वारा सन्तान पैदा कर लेवे उस पतित हुई पापिनी स्त्री को राजा स्वदेश से निकालदे अन्य किसी राज्य में भेज देवे ॥ ३० ॥ यदि कोई ब्राह्मणी अन्य पुरुष के साथ मेल करके अपने घर से भाग जावे तो उस को नष्ट भ्रष्ट जानो । वह फिर प्रायश्चित्त द्वारा भी ग्राह्य नहीं है ॥ ३१ ॥ जो स्त्री किसी पुरुष पर कामासक्त होके वा अज्ञान रूप मोह से, अपने पति, पुत्रों और बन्धुओं को त्याग के किसी अन्य पुरुष के साथ निकल जावे वह भी परलोक से नष्ट होती उसका परलोक बिगड़ जाता और विशेष कर यह लोक तो बिगड़ता ही है ॥ ३२ ॥ मथादि नशा पीकर वा अज्ञानाहंकार से बिगड़ती हुई स्त्री को क्रोध के साथ पति आदि ने पीटा हो और घर से निकल जावे परन्तु अन्य पुरुष से संपर्कन होने कापक्का

दशमेतुदिनेप्राप्ते प्रायश्चित्तं न विद्यते ।

दशाहं न त्यजेन्नारीं त्यजेन्नृपुत्रां तथा ॥ ३४ ॥

भर्ता चैव चरेत्कृच्छ्रं कृच्छ्रादुचैव बान्धवाः ।

तेषां भुक्त्वा च पीत्वा च अहोरात्रेण शुद्ध्यति ॥ ३५ ॥

ब्राह्मणी तु यदा गच्छेत्परपुंसां विवर्जिता ।

गत्वा पुंसां शतं याति त्यजेयुस्तां तु गोत्रिणः ॥ ३६ ॥

पुंसो यदि गृहं गच्छेत्तदशुद्दं गृहं भवेत् ।

पितृमातृगृहं यच्च जारस्यैव तु तद्गृहम् ॥ ३७ ॥

उल्लिख्य तद्गृहं पश्चात्पञ्चगव्येन सेचयेत् ।

त्यजेच्च मृन्मयं पात्रं वस्त्रं काष्ठं च शोधयेत् ॥ ३८ ॥

संभाराऽल्लो धयेत्सर्वान्गोक्षैश्च फलोद्भवान् ।

तामाणि पञ्चगव्येन कांस्यानि दशभस्मभिः ॥ ३९ ॥

प्रमाण मिले तो उसे फिर अपने घर में रख लेना चाहिये ॥ ३३ ॥ यदि स्त्री को घरसे निकले दश दिन बीत जायें तो उसका प्रायश्चित्त नहीं हो सकता । अर्थात् दश दिन तक न त्यागे और दश दिन के भीतर भी स्वधर्म से नष्ट हुई सुनले तो अवश्य त्याग देवे ॥ ३४ ॥ जिस की स्त्री बाहर निकल गई हो वह पति कृच्छ्रव्रत करे और स्त्री के भाई आदि आधा कृच्छ्रव्रत करें । तब उन के घर अन्य विरादरी के लोग खा पीकर एक दिन रात में शुद्ध करें ॥ ३५ ॥ यदि कोई ब्राह्मणी पति आदि के रोकने पर भी अन्य पुरुष के साथ कहीं चली जावे और जाकर सैकड़ों पुरुषों से मेल मिलाप करे वह फिर भी लौट आना चाहे तो कुटुम्बी लोग उस का त्याग ही कर देवें ॥ ३६ ॥ यदि वह ब्राह्मणी पति के घर में आवे तो वह घर अशुद्ध हो जायगा । और यदि अपने मा बाप के घरमें जाके रहे तो वह भी व्यभिचारी जार का घर कहावेगा ॥ ३७ ॥ उस घर को ऊपर २ से छील कर फिर से लेपन करके उस में पञ्चगव्य का सेचन करे उस घर में जितने मट्टी के पात्र हों सब निकाल के फेंक देवे तथा वस्त्रों और काष्ठ के पात्रों की शुद्धि करे ॥ ३८ ॥ फिर घर के सब सामान की शुद्धि करे तथा फल सम्बन्धी तैलादि की शुद्धि गौ के बालों से करे । तामे के पात्रों की पञ्चगव्य के मर्दन से और कांसे के पात्रों की दशवार भस्मों से शुद्धि करे ॥ ३९ ॥ फिर वह ब्राह्मण

प्रायश्चित्तचरेद्विप्रो ब्राह्मणैरुपपादितम् ।  
 गोद्वयंदक्षिणांदद्यात्प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ४० ॥  
 इतरेषामहोरात्रं पञ्चगव्येनशोधनम् ।  
 सपुत्रःसहभृत्यश्च कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ४१ ॥  
 उपवासैर्व्रतैःपुण्यैः स्नानसंध्यार्चनादिभिः ।  
 जपहोमदयादानैः शुद्ध्यन्तेब्राह्मणादयः ॥ ४२ ॥  
 आकाशंवायुरग्निश्च मेध्यंभूमिगतंजलम् ।  
 नदुष्यन्तिचदर्भाश्च यज्ञेषुचमसायंथा ॥ ४३ ॥  
 इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अमेध्यरेतोगोमांसं चाण्डालान्नमथापिवा ।  
 यदिभुक्तंतुविप्रेण कृच्छ्रं चान्द्रायणंचरेत् ॥ १ ॥  
 तथैवक्षत्रियोवैश्य-स्तदहुंतुसमाचरेत् ।  
 शूद्रोऽप्येवंयदाभुङ्क्ते प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २ ॥

विद्वान् ब्राह्मणों की आज्ञानुसार प्रायश्चित्त करे । अर्थात् दो प्राजापत्य व्रत करे और दो गौ दक्षिणा में देवे ॥ ४० ॥ उस घर के अन्य लोग एक दिन रात पञ्चगव्य पीके उपवास द्वारा शुद्ध करें । फिर पुत्र और भृत्यादि सहित ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ४१ सामान्य कर उपवास, व्रत, पुण्य, तीर्थादि में स्नान, देवपूजा, जप, होम, दया, दान, इत्यादि कामों के द्वारा ब्राह्मणादि शुद्ध होते हैं ॥ ४२ ॥ आकाश, वायु, अग्नि, शुद्धभूमि में भरा वा नदी में बहता हुआ जल, और दाम ये पदार्थ नीच के स्पर्शादि से दूषित नहीं होते कि जैसे यज्ञों में सोमरस के चमस उच्छिष्ट नहीं होते ॥ ४३ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में दशवां अध्याय पूरा हुआ ॥

लहसुत आदि अमश्य, वीर्य, गोमांस, चाण्डालका अन्न, यदि ब्राह्मण इन पदार्थों को खा लेवे तो कृच्छ्र चान्द्रायण व्रत करे ॥ १ ॥ वैसे ही क्षत्रिय वा वैश्य उक्त पदार्थों को खावे तो उससे आधा व्रत करें । तथा शूद्र भी उक्त पदार्थों को खावे तो एक प्राजापत्य व्रत करे ॥ २ ॥ फिर शूद्र, पञ्चगव्य पीवे और विज्र ब्रह्म कूर्च पीवे । एक

पञ्चगव्यं पिवेच्छूद्रो ब्रह्मकूर्चं पिवेद्द्विजः ।  
 एकद्वित्रिचतुर्गावो दद्याद्विप्राद्यनुक्रमात् ॥ ३ ॥  
 शूद्रान्नं सूतकस्यान्न-मभोज्यस्यान्नमेव च ।  
 शङ्कितं प्रतिपिद्वान्नं, पूर्वोच्छिष्टं तथैव च ॥ ४ ॥  
 यदि भुक्तं तु विप्रेण अज्ञानादापदापि वा ।  
 ज्ञात्वा समाचरेत्कृच्छ्रं ब्रह्मकूर्चं तु पावनम् ॥ ५ ॥  
 व्यालैर्नकुलमार्जारैरन्नमुच्छिष्टितं यदा ।  
 तिलदध्मादकैः प्रोक्ष्य शुद्ध्यते नात्र संशयः ॥ ६ ॥  
 शूद्रोऽप्यभोज्यं भुक्त्वान्नं पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ।  
 क्षत्रियोऽपि वैश्यश्च प्राजापत्येन शुद्ध्यति ॥ ७ ॥  
 एकपङ्क्तयुपविष्टानां विप्राणां सहभोजने ।  
 यद्येकोऽपित्यजेत्पात्रं शेषमन्नं न भोजयेत् ॥ ८ ॥  
 मोहाद्भुज्जीतयस्तत्र पङ्क्तावुच्छिष्टभोजने ।  
 प्रायश्चित्तं चरेद्विप्रः कृच्छ्रं सांतपनं तथा ॥ ९ ॥

दो, तीन, तथा चार गीर्षों का दान चारों वर्ण क्रमसे करें ॥३॥ शूद्र का, सूतक वाले का, जिस २ के अन्न का नियंत्रण किया है उसका, जिसमें अपवित्र होने की शंका हो गई हो, जिस (वासी आदि) का खाना मना किया हो, और जो पहिले भोजन करने से बचा हो ॥ ४ ॥ ऐसा पूर्वोक्त शूद्रादि का अन्न ब्राह्मण ने अन्नान से वा आपत्काल में यदि खाया हो तो जानलेने पर कृच्छ्रव्रत करे और ब्रह्मकूर्च भी पवित्र करने वाला है ॥ ५ ॥ जिस अन्नमें से साँप, न्योला और विलाव ने कुछ खाके उच्छिष्ट कर दिया उस में का उच्छिष्टांश निकाल कर तिल और दध्म मिलाये जल से मार्जन करने से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है शूद्र भी अभोज्य अन्न को खाले तो पञ्चगव्य से शुद्ध होता है । तथा क्षत्रिय और वैश्य भी अशुद्ध वा वर्जित अन्नको खावें तो प्राजापत्य व्रत करने से शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥ एक पांति में बैठ कर एक साथ भोजन करते हुए ब्राह्मणों में से यदि एक भुज्जी भी पत्तल को त्याग देवे तो पङ्क्ति वाले सभी शेष अन्न को उच्छिष्ट समझ कर न खावें ॥ ८ ॥ यदि कोई ब्राह्मण अन्नान से उस पांतिमें उच्छिष्ट अन्न को खावे तो ब्राह्मण कृच्छ्र सान्त्पन व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ ९ ॥ गिजरी,

पीयूषं श्वेतलशुनं वृन्ताकफलगृज्जने ।  
 पलाण्डुवृक्षनिर्यासान् देवस्वकवकानि च ॥ १० ॥  
 उष्ट्रीक्षीरमवीक्षीर-मज्ञानादभक्षयेद्विजः ।  
 त्रिरात्रमुपवासेन पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥ ११ ॥  
 मण्डूकभक्षयित्वा तु मूषिकामांसमेव च ।  
 ज्ञात्वा विप्रस्त्वहोरात्रं यावकान्नेन शुद्ध्यति ॥ १२ ॥  
 क्षत्रियश्चापि वैश्यश्च क्रियावन्तौ शुचिर्ब्रतौ ।  
 तद्गृहेषु द्विजैर्भोज्यं हव्यकव्येषु नित्यशः ॥ १३ ॥  
 घृतं क्षीरं तथा तैलं गुडं तैलेन पाचितम् ।  
 गत्वा नदी तटे विप्रो भुञ्जीयाच्छूद्रभाजने ॥ १४ ॥  
 मद्यमांसरतं नित्यं नीचकर्म प्रवर्तकम् ।  
 तं शूद्रं वर्जयेद्विप्रः श्रपाकमिव दूरतः ॥ १५ ॥  
 द्विजशुश्रूषणरता-न्मद्यमांसविवर्जितान् ।  
 स्वकर्मनिरतान्नित्यं ताञ्छूद्रान्नित्यजेद्विजः ॥ १६ ॥

( दशदिन के भीतर का गोदुग्ध ) सफेद लहसुन, वेंगन, गाजर, प्याज, वृक्षों का गोंद, देवताका धन, कठफूल ॥ १० ॥ उष्ट्री का दूध, भेड़ का दूध इन सब को जो ब्राह्मण अज्ञानसे खावे वह तीन उपवास करके पञ्चगव्य से शुद्ध होता है ॥ ११ ॥ मंडक, चूहा इन का मांस ब्राह्मण जान कर खाले तो एक दिन रात कुलत्थी अथवा खाने से शुद्ध होता है ॥ १२ ॥ जो क्षत्रिय और वैश्य बाहरी भीतरी सब प्रकार की शुद्धि नियम से रखते हुए सन्ध्या तर्पण पञ्चमहायज्ञादि कर्म यथावत् करते हों उनके घरों में देव-पितर सम्बन्धी कामों के समय ब्राह्मणों को सदा भोजन करना चाहिये ॥ १३ ॥ घी, दूध, तैल, गुड़, और तैल से पकाया कोई पदार्थ हो शूद्र के घर के इन सब को नदी किनारे जाकर शूद्र के पात्र में भी ब्राह्मण खा सकता है ॥ १४ ॥ जो मद्य मांस खाने पीने में तत्पर तथा नीच कर्मों का प्रवर्तक हो ऐसे शूद्र को चाण्डाल के तुल्य नीच समझ कर ब्राह्मण दूर से त्याग देवे ॥ १५ ॥ मद्य मांस जिन ने त्याग दिया हो ब्राह्मणों की सेवा शुश्रूषामें जो तत्पर हों ऐसे स्वकर्मनिष्ठ शूद्रों का त्याग

अज्ञानाद्भुञ्जतेविप्रः सूतकेमृतकेऽपिवा ।

प्रायश्चित्तंकथंतेषां वर्णवर्णविनिर्दिशेत् ॥ १७ ॥

गायत्र्यष्टसहस्रेण शुद्धिःस्याच्छूद्रसूतके ।

वैश्यैपञ्चसहस्रेण त्रिसहस्रेणक्षत्रिये ॥ १८ ॥

ब्राह्मणस्ययदाभुङ्क्ते प्राणायामेनशुद्ध्यति ।

अथवावामदेव्येन साम्नाचैकेनशुद्ध्यति ॥ १९ ॥

शुष्कान्नंगोरसस्नेहं शूद्रवेश्मनआगतम् ।

पक्वविप्रगृहेभुङ्क्ते भोज्यंतमनुरब्रवीत् ॥ २० ॥

आपत्कालेतुविप्रेण भुक्तंशूद्रगृहेयदि ।

मनस्तापेनशुद्ध्येत द्रुपदांचशतंजपेत् ॥ २१ ॥

दासनापितगोपाल-कुलमित्राद्वृत्सीरिणः ।

एतेशूद्रेषुभोज्यान्ता यश्चात्मानंनिवेदयेत् ॥ २२ ॥

ब्राह्मण न करे ॥ १६ ॥ जो ब्राह्मण लोग अज्ञान से जन्म सूतक में वा मृतक अशुद्धि में किसी के यहां भोजन करते हैं उन का वर्ण २ में प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ १७ ॥ शूद्रके सूतक में किये भोजन पर आठ हजार गायत्री जपने से शुद्धि होती, वैश्य के घर में भोजन करने से पांच हजार गायत्री का और क्षत्रिय के घरमें सूतक के समय भोजन करे तो तीन हजार गायत्री का जप करने से शुद्धि होती है ॥ १८ ॥ और ब्राह्मण के घर में सूतक के समय खावे तो प्राणायाम करने से ही शुद्ध हो जाता है । अथवा एक बार वामदेव्य साम का गान करने से शुद्ध हो जाता है ॥ १९ ॥ सूखा अन्न, गोरस, घी, तैल, इन को शूद्र के घर से लेकर ब्राह्मण के घर में पकाने पर भोजन करने योग्य पवित्र होजाता है यह मनुजी ने कहा है ॥ २० ॥ यदि आपत्काल में ब्राह्मणने शूद्रके घरमें भोजन कर लिया हो तो मन में पश्चात्ताप करने से शुद्ध होजाता है और (द्रुपदादिव) मन्त्र को एक सौ जप लेवे ॥ २१ ॥ दासनाम कहार, नाई, आमीर (अहीर) अपने कुल का मित्र, (कुल मित्र शब्द का अपभ्रंश कुमी हुआ हो यह भी सम्भव है) खेती में आधा सांझी, ये सब शूद्रों में भोजन करने योग्य हैं अर्थात् इनका तथा शरणागत शूद्र का सूखा अन्न आटा दाल आदि भोजनार्थ लेने में ब्राह्मण को दोष नहीं लगता है ॥ २२ ॥ ब्राह्मण से शूद्र की कन्या में जो संन्तात पैदा हो उस का संस्कार यदि

शूद्रकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ।  
 संस्कृतस्तुभवेद्दासो ह्यसंस्कारैस्तुनापितः ॥ २३ ॥  
 क्षत्रियाच्छूद्रकन्यायां समुत्पन्नस्तुयःसुतः ।  
 सगोपालइतिख्यातो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २४ ॥  
 वैश्यकन्यासमुद्भूतो ब्रह्मणेनतुसंस्कृतः ।  
 सह्यादिकइतिज्ञेयो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २५ ॥  
 भाण्डस्थितमभोज्येषु जलं दधिघृतं पयः ।  
 अकामतस्तुयोभुङ्क्ते प्रायश्चित्तकथं भवेत् ॥ २६ ॥  
 ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वाप्युपसर्पति ।  
 ब्रह्मकूर्चोपवासेन यथावर्णस्य निष्कृतिः ॥ २७ ॥  
 शूद्राणां नोपवासः स्याच्छूद्रोदानेन शुद्ध्यति ।  
 ब्रह्मकूर्चमहोरात्रं श्रुपाकमपिशोधयेत् ॥ २८ ॥

ब्राह्मण ने कराया हो तो वह दास (कहार) माना जावे और यदि संस्कार न हो तो वह नाई होगा । (यहां संस्कार पद से ब्राह्मण द्वारा पालन पोषण अर्थ लेना चाहिये) ॥ २३ ॥ क्षत्रिय पुरुष से शूद्र की कन्या में जो सन्तान पैदा हो उसको गोपाल कहते हैं । ब्राह्मण लोग उस गोपाल का अन्न खा सकते हैं इस में सन्देह नहीं ॥ २४ ॥ क्षत्रिय से वैश्य की कन्या में जो सन्तान पैदा हो और ब्राह्मण उसका संस्कार करे तो वह आर्द्रिक कहाता है और ब्राह्मण लोग उस का अन्न निःसन्देह खावें ॥ २५ ॥ जिन का अन्न खाना वर्जित है उनके पात्र में रक्खा जल, दही, घी, वा दूध इन को जो कामना के बिना खाता है उस का प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ २६ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र यदि उक्त अपराध का प्रायश्चित्त धर्म समा से चाहें तो ब्रह्मकूर्च रूप उपवास से यथा योग्य भिन्न २ प्रकार वर्णों का प्रायश्चित्त जानो ॥ २७ ॥ शूद्रों के लिये ब्रह्मकूर्चादि का पान वा उपवास करना निषिद्ध है किन्तु शूद्रदान करने से शुद्ध हो जाता है । ब्राह्मणादि द्विज पुरुष एक दिन रात ब्रह्मकूर्च उपवास करे तो चारहाल के तुल्य लगे दोष को भी यह धत शूद्र कर देता है ॥ २८ ॥ (अब तक पूर्व में कई

गोमूत्रंगोमयक्षीरं दधिसर्पिकुशोदकम् ।  
 निर्दिष्टपञ्चगव्यं च पवित्रं पापशोधनम् ॥ २९ ॥  
 गोमूत्रं कृष्णवर्णायाः श्वेतायाश्चैव गोमयम् ।  
 पयश्च ताम्रवर्णाया रक्ताया गृह्यते दधि ॥ ३० ॥  
 कपिलाया घृतं ग्राह्यं सर्वकापिलमेव वा ।  
 मूत्रमेकपलं दद्याद्द्विगुणं तृणं तु गोमयम् ॥ ३१ ॥  
 क्षीरं सप्तपलं दद्याद्दधि त्रिपलमुच्यते ।  
 घृतमेकपलं दद्यात्पलमेकं कुशोदकम् ॥ ३२ ॥  
 गायत्र्या दाय गोमूत्रं गन्धद्वारेति गोमयम् ।  
 आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्रावणस्तथा दधि ॥ ३३ ॥  
 तेजोसिशुक्रमित्याज्यं देवस्य त्वाकुशोदकम् ।  
 पञ्चगव्यमृचापूतं स्थापयेदग्निसन्निधौ ॥ ३४ ॥

चार ब्रह्मकूर्च उपवास का प्रसंग आ चुका है तो अब यहांसे ४० श्लोक तक ब्रह्मकूर्च का विधान कहते हैं-तो जहां २-ब्रह्मकूर्च कहा है वहां २-इसी विधान को जान लेना) गोमूत्र, गोमूत्र, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, और कुशों को पीस कर निचोड़ा जल-इस प्रकार कुशोदक और पञ्चगव्य का निम्न-रीति से सेवन करना परम पवित्र होने से पापों का शोधन करने वाला है ॥२९॥ काली गौ का गोमूत्र लेवे, श्वेत गौ का गोघृत लेवे, ताम्र वर्ण गौ का दूध लेवे, लाल गौ का दही ॥ ३० ॥ कपिला गौ का घी लेना चाहिये । अथवा गोमूत्रादि सभी कपिला गौ का लेवे । एक पल ( चार तोला ) गोमूत्र, अपने आँखें अंगूठे भर गोघृत ॥३१॥ सात पल (अष्टादश तोला) गौ का दूध लेवे, तीन पल ( १२ तोला ) दही, एक पल (४ तोला) घी और एक पल कुशोदक लेवे ॥३२॥ (तत्सवितुः) गायत्रीसे गोमूत्र, (गन्धद्वारा) लक्ष्मीसूक्त के मन्त्रसे गोघृत, (आप्यायस्व समेतुं यजुः अ० २।१।१२) मन्त्रसे दूध, (दधि क्रावणोक्ता यजुः अ० २३।३२) मन्त्रसे दही (तेजोऽसिशुक्रमस्य यजुः १।३१) मन्त्रसे घी, (देवस्य त्वां हस्ताभ्यां गृह्णामि यजुः अ० १।१०) मन्त्रसे कुशोदक लेवे । इस प्रकार ऋचाओंसे पवित्र किये पञ्चगव्य तथा कुशोदक को लेकर अग्निकुण्ड के समीप स्थापित करे ॥३३। ३४॥ फिर (आपो-

आपोहिष्ठेतिचालोडय मानस्तोकेतिमन्त्रयेत् ।  
 सप्तावरास्तुयेदर्भा अच्छिन्नाग्राःशुकत्विषः ॥ ३५ ॥  
 एतैरुद्धृत्यहोतव्यं पञ्चगव्यंयथाविधि ।  
 इरावतीइदंविष्णुर्मानस्तोकेचशंवती ॥ ३६ ॥  
 एताभिश्चैवहोतव्यं हुतशेषंपिवेद्विजः ॥ ३७ ॥  
 आलोडयप्रणवेनैव निर्मथ्यप्रणवेनतु ।  
 उद्धृत्यप्रणवेनैव पिवेच्चप्रणवेनतु ॥ ३८ ॥  
 यत्त्वगस्थिगतंपापं देहेतिष्ठतिदेहिनाम् ।  
 ब्रह्मकूर्चोदहेत्सर्वं यथैवाग्निरिवेन्धनम् ॥ ३९ ॥  
 पवित्रंत्रिपुल्लोकेषु देवताभिरधिष्ठितम् ।  
 वरुणश्चैवगोमूत्रे गोमयेहव्यवाहनः ।  
 दध्निवायुःसमुद्दिष्टः सोमःक्षीरेघृतेरविः ॥ ४० ॥

हिष्ठा० यजु० अ० ११ । ५० ) इत्यादि तीन मन्त्रों से गोमूत्रादि सब को मिला के ( आलोडन करके ) ( मानस्तोके० यजु० अ० १६ । १६ ) मन्त्र से अमिमन्त्रण करे अर्थात् मन्त्र पढ़ता हुआ गोमूत्रादि को देखे । फिर जिनका अग्रभाग न टूटा हो ऐसे ठीक २ हरे कम से कम सात दामों से ॥ ३५ ॥ कुशोदक सहित पञ्चगव्य को ले २ कर निम्न मन्त्रों से यथाविधि होम करे । ( इरावती धेनुमती० यजु० अ० ५ । १६ ) ( इदं विष्णुवि० यजु० अ० ५ । १५ ) ( मानस्तोकेतनये० यजु० अ० १६ । १६ ) और यजु० अ० ३६ के ( शानो मित्रः० ) इत्यादि श शब्द वाले मन्त्रों से ॥ ३६ ॥ होम करे फिर होम से शेष बचे भागको निम्न प्रकार पीवे ॥ ३७ ॥ ओंकार से आलोडन कर ओंकार से मन्थन कर ओंकार से ही उठाकर तथा ओंकार पढ़ के ही पीवे ॥ ३८ ॥ जो पाप मनुष्यों के शरीर की त्वचा तथा हड्डियों में भी पैठ गया हो उस सब को यह ब्रह्मकूर्च ऐसे ही भस्म कर देता है जैसे कि ईंधन को अग्नि जलावे ॥ ३९ ॥ यह ब्रह्मकूर्च अनेक देवताओं से अधिष्ठित होने से तीनों लोक में अति पवित्र है । गोमूत्र में वरुण देवता, गोबर में अग्नि, दही में वायु, दूध में सोम, और घी में सूर्य नारायण विराजते हैं ॥ ४० ॥ जल पीते समय मुख से निकल के जलपात्र में जूठा

पिवतः पतितं तोयं भाजने मुखनिःसृतम् ।

अपेयं तद्विजानीयाद् भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ ४१ ॥

कूपे च पतितं दृष्ट्वा श्वशृगालौ च मर्कटम् ।

अस्थि चर्मादि पतिताः पीत्वामेध्या अपो द्विजः ॥ ४२ ॥

नारंतुकुणपंकाकं विडूवराहं खरोष्ट्रकम् ।

गावयं सीप्रतीकं च मायूरं खाड्गकं तथा ॥ ४३ ॥

वैयाघ्रमाक्षं सैहं वा कूपे यदि निमज्जति ॥ ४४ ॥

तडागस्याऽपि दृष्टस्य पीतं स्यादुदकं यदि ।

प्रायश्चित्तं भवेत्पुंसः क्रमेणैतेन सर्वशः ॥ ४५ ॥

विप्रः शुद्धध्ये त्रिरात्रेण क्षत्रियस्तु दिनद्वयात् ।

एकाहेन तु वैश्यश्च शूद्रो नक्तेन शुद्ध्यति ॥ ४६ ॥

परपाकनिवृत्तस्य परपाकरतस्य च ।

अपचस्य च भुक्त्वा न्नं द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ॥ ४७ ॥

अपचस्य तु यद्दानं दातुरस्य कुतः फलम् ।

दाता प्रतिग्रहीता च द्वीतौ निरयगामिनौ ॥ ४८ ॥

जल गिरजाय तो ब्रह्म पात्र का जल पीने योग्य नहीं है । यदि उसको पीलेवे तो चान्द्रायण व्रत करे ॥ ४१ ॥ यदि कुप में कुत्ता, गीदड़, बन्दर, हाड़, चाम आदि गिरे हुए देखकर भी द्विज पुरुष उस अशुद्ध जल को पी लेवे ॥ ४२ ॥ मनुष्य का सुर्दा देह, कौवा, विष्णु खाने वाला सुअर, गधा, ऊँट, गवय, ( नीलगाय ) हाथी, मोर, गेंडा, ॥ ४३ ॥ बाघ, चील, सिंह, ये यदि कूप में डूब जाय ॥ ४४ ॥ और तालाब का विगड़ा हुआ खराब दुर्गन्ध युक्त जल भी यदि पीया जाय तो पुरुषों का क्रमसे यह निम्न प्रायश्चित्त है कि ॥ ४५ ॥ ब्राह्मण तीन दिन रात, क्षत्रिय दो दिन रातके उपवाससे, वैश्य एक दिन रात के उपवास से और शूद्र रातभर के उपवास से शुद्ध होता है ॥ ४६ ॥ जो पुरुष परपाक से निवृत्त हो और जो परपाक रत हो इन दोनों का और १५ श्लोक में कहे अपच का अन्न खाकर ब्राह्मण चान्द्रायण व्रत करे ॥ ४७ ॥ अपच पुरुष को जो दान देवे उस का दाता को फल कहां ? दान का दाता और लेने वाला ये दोनों नरक

गृहीत्वाग्निं समारोप्य पञ्चयज्ञान्निर्वपेत् ।  
 परपाकनिवृत्तोऽसौ मुनिभिः परिकीर्तितः ॥ ४९ ॥  
 पञ्चयज्ञान्स्वयंकृत्वा परान्नेनोपजीवति ।  
 सततं प्रातरुत्थाय परपाकरतस्तुतः ॥ ५० ॥  
 गृहस्थधर्मैर्यो विप्रो ददाति परिवर्जितः ।  
 ऋषिभिर्धर्मतत्त्वज्ञैरपचः परिकीर्तितः ॥ ५१ ॥  
 युगे युगे तु ये धर्मास्तेषु ते पुचये द्विजाः ।  
 तेषां निन्दानं कर्तव्या युगरूपाहिते द्विजाः ॥ ५२ ॥  
 हुंकारं ब्राह्मणसंयोजत्वा त्वंकारं च गरीयसः ।  
 स्नात्वा तिष्ठन् ब्रह्मशेषमभिवाद्य प्रसादयेत् ॥ ५३ ॥  
 ताडयित्वा तृणेनापि कण्ठे बध्वा पिवाससा ।  
 विवादेनापि निर्जित्य प्रणिपत्य प्रसादयेत् ॥ ५४ ॥

में जाते हैं ॥ ४८ ॥ जो पुरुष अग्नि को स्थापन करके अरणी में समारोप करके पञ्च-  
 महायज्ञ न करे । मुनियों ने उसको "परपाक निवृत्त" कहा है ॥ ४९ ॥ और जो  
 नित्य प्रातःकाल उठकर आप ही पञ्चमहायज्ञ करके अन्य के पकाये अन्न को खाता  
 हो वह "परपाकरत" कहलाता है ॥ ५० ॥ अर्थात् ये दोनों ही बुरे निम्नित हैं । परं  
 शर्म वैश्व देवार्थ अन्न पकाना चाहिये उसी का शेष खानों अमृतभोजन है । और  
 पर नामे अन्य के पकाये में खाने की रुचि न रखे । गृहस्थों के धर्म में तत्पर जो  
 ब्राह्मण हो और दान धर्म से वर्जित हो ( दान कुछ न देता हो अर्थात् पञ्चमहायज्ञों  
 द्वारा देवतादि को भी कुछ न देता हो ) धर्म तत्त्व के ज्ञाता ऋषियों ने उसे "अपच"  
 कहा है ॥ ५१ ॥ युग २ में जो भिन्न २ धर्म हैं उन २ धर्मों में तत्पर जो ब्राह्मण उन  
 ब्राह्मणों को निन्दा नहीं करना चाहिये क्योंकि वे ब्राह्मण युग के अनुरूप हैं सद्युगी,  
 त्रेतायुगी द्वापरयुगी, और कलियुगी ब्राह्मण भिन्न रहेंगे । कलमें अन्य युगों कीसे  
 ब्राह्मण हो ही नहीं सकते ॥ ५२ ॥ बड़े विद्वान् धर्मनिष्ठ ब्राह्मण को हुंकार और  
 किसी मान्य पुरुष से त्वंकार ( हुं वा तूं ) जिस समय कहे उस समय जितना दिन  
 शेष हो उतने काल तक स्नात्न करके खड़ा रहे फिर अभिवादन करके प्रसन्न (राजी)  
 करे ॥ ५३ ॥ तृण से भी ब्राह्मण को ताड़ना करके और ब्राह्मण के कण्ठ में बल भी  
 बांधकर अथवा ब्राह्मण को शास्त्रार्थ में जीतकर नमस्कार करके प्रसन्न करे ॥ ५४ ॥

अवगूर्यत्वहोरात्रं त्रिरात्रं क्षितिपातने ।

अतिकृच्छ्रं च रुधिरं कृच्छ्रमन्तरशोणिते ॥ ५५ ॥

नवाहमतिकृच्छ्री स्यात्पाणिपूरान्नभोजनम् ।

त्रिरात्रमुपवासः स्यादतिकृच्छ्रः स उच्यते ॥ ५६ ॥

सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते ।

शतं साहस्रमभ्यस्ता गायत्रीशोधनं परम् ॥ ५७ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

दुःस्वप्नं यदि पश्येत्तु वान्ते वा क्षुरकर्मणि ।

मैथुने प्रेतधूमे च स्नानमेव विधीयते ॥ १ ॥

अज्ञानात्प्राश्य विष्णुमूत्रं सुरासं स्पृष्टमेव च ।

पुनः संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥ २ ॥

अजिनं मेखलादण्डो भैक्षचर्याव्रतानि च ।

निवर्त्तन्ते द्विजातीनां पुनः संस्कारकर्मणि ॥ ३ ॥

ब्राह्मण की ओर गुरा कर वा पेंठ दिखा के एक दिन रात और पृथिवी पर पटक देकर तीन दिन रात उपवास करे । ब्राह्मण के रुधिर निकालने पर अतिकृच्छ्र ब्रत करे और रुधिर न निकले किन्तु दही छोट लगे तो कृच्छ्रब्रत करे ॥ ५५ ॥ जो नौ ६ दिन तक पकाया हुआ अंजलि भर अन्न खावे और अन्त में तीन दिन रात उपवास करे उसे अतिकृच्छ्र कहते हैं ॥ ५६ ॥ यदि सब पापों का संकर होजाय अर्थात् अनेक प्रकार के अनेक पाप जिस ने किये हों वह सौहजार ( एक लाख ) वा सवा लाख गायत्री का अभ्यास जप करे यह अनुष्ठान परम शुद्धि करने वाला है ॥ ५७ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में अष्टादशोऽध्याय पूरा हुआ ॥

चमन, क्षौर कर्म, मैथुन, प्रेत का धूम, इन विषयों में वा इन का खोटा स्वप्न देखे तो तत्काल स्नान करना कहा है ॥ १ ॥ अज्ञान से विष्ठा, मूत्र, और जिस में मदिरा मिली हो उस को खाकर ब्राह्मणादि तीनों द्विजाति फिर से यज्ञोपवीत संस्कार के योग्य होते हैं ॥ २ ॥ द्विजातियों के फिर (दुबारा) उपनयन संस्कार कर्म में मृग छाला, मौझी मेखला, पलाशादि का दंड, भिक्षा भांगने के नियम, ये सब निवृत्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥ पुनः संस्कार हो जाने पर भक्षण किये विष्ठा मूत्र की शुद्धि के लिये

विष्णुमूत्रस्य च शुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ।

पञ्चगव्यं च कुर्वीत स्नात्वा पीत्वा शुचिर्भवेत् ॥ ४ ॥

जलाग्निपतने चैव प्रव्रज्यानाशकेषु च ।

प्रत्यवसितवर्णानां कथं शुद्धिर्विधीयते ॥ ५ ॥

प्राजापत्यद्वयेनैव तीर्थाभिगमनेन च ।

वृषैकादशदानेन वर्णाः शुद्ध्यन्ति ते त्रयः ॥ ६ ॥

ब्राह्मणस्य प्रवक्ष्यामि वनंगत्वा च तुष्टपथे ।

सशिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥ ७ ॥

गौद्वयं दक्षिणां दद्याच्छुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् ।

मुच्यते तेन पापेन ब्राह्मणत्वं च गच्छति ॥ ८ ॥

स्नानानि पञ्चपुण्यानि कीर्त्तितानि मनीषिभिः ।

आग्नेयं वारुणं ब्राह्मं वायव्यं दिव्यमेव च ॥ ९ ॥

आग्नेयं भस्मना स्नानं भवगाह्यतु वारुणम् ।

आपो हिष्टेति च ब्राह्मं वायव्यं गोरजः स्मृतम् ॥ १० ॥

प्राजापत्य व्रत करै और पंचगव्य वनावे तब स्नान (करके पंचगव्य को पीकर शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥ स्नान का नियम बिगाड़ने, वा स्थापित अग्नि के बुत जाने पर और संन्यास धर्म को बिगाड़ने वाला कोई काम बन पड़े तो हीन हुए तीनों वर्णों की कैसे शुद्धि हो सों कहते हैं ॥ ५ ॥ दो प्राजापत्य व्रतों से, तीर्थों की यात्रा से, ग्यारह बैलों का दान करने से, वे तीनों वर्ण क्रम से शुद्ध होते हैं ॥ ६ ॥ उन में ब्राह्मण का प्रायश्चित्त प्रथम कहते हैं । वह ब्राह्मण वन में जाकर चौराहे पर शिखा सहित सब धालों का मुंडन कराके दो प्राजापत्य व्रत करै ॥ ७ ॥ फिर दो गौ दक्षिणा में देवे यह शुद्धि पाराशर ने कही है । फिर ब्राह्मण उस पाप से छूट जाता है और ब्राह्मणपन को प्राप्त हो जाता है ॥ ८ ॥ मुनि लोगों ने पांच स्नान पवित्र कहे हैं १ अग्नेय, २ वारुण, ३ ब्राह्म, ४ वायव्य, ५ दिव्य, ॥ ९ ॥ भस्म से किया स्नान आग्नेय, जल से किये को वारुण, ( आपो हिष्टा० ) इन तीन आदि मंत्रों से किये स्नान को ब्राह्म, गौओं के पगों से उड़ी धूलि से किये को वायव्य स्नान, कहते हैं ॥ १० ॥ और जो धर्मा के समय धूप भी निकल रही हो उस समय मेघ की वृद्धों से जो स्नान करे उसे

यत्संज्ञातपवर्षेण स्नानंतद्विव्यमुच्यते ।

तत्रस्नात्वातुंगंगायां स्नातोभवतिमानवः ॥ ११ ॥

स्नातुंयान्तद्विजसर्वे देवाःपितृगणैःसह ।

वायुभूतास्तुगच्छन्ति तृषार्त्ताःसलिलार्थिनः ॥ १२ ॥

निराशास्तेनिवर्तन्ते वस्त्रनिष्पीडनेकृते ।

तस्मान्नपीडयेद्वस्त्रमकृत्वापितृतर्पणम् ॥ १३ ॥

रोमकूपेष्ववस्थाप्य यस्तिष्ठैस्तर्पयेत्पितॄन् ।

तर्पितास्तेनतेसर्वे रुधिरेणमलेनच ॥ १४ ॥

अवधूनोतियःकेशान् स्नात्वाप्रस्रवतोद्विजः ।

आचामेद्वाजलस्योपि ब्राह्मःसपितृदैवतैः ॥ १५ ॥

शिरःप्रावृत्यकण्ठंवा मुक्तकच्छशिखोप्रवा ।

विनायज्ञोप्रवीतेन आचान्तोप्यशुचिर्भवेत् ॥ १६ ॥

जलेस्थलस्योनाचामेज्जलस्थश्चवह्निस्थले ।

उभेस्पृष्ट्वासमाचामेदुमयत्रशुचिर्भवेत् ॥ १७ ॥

दिव्य स्नान कहते हैं क्योंकि उस वर्षा में स्नान करके मनुष्य को गंगा के स्नान का फल होता है ॥ ११ ॥ जिस समय ब्राह्मण स्नान करने को जाता है उस समय सब देवता, पितरों के सहित तृषा से पीडित हुए जल के लिये वायु का रूप धारण करके ब्राह्मण के पीछे २ चलते हैं ॥ १२ ॥ यदि वह ब्राह्मण तर्पण करने से पहिले वस्त्र (धोती) निचोड़ ले तो वे निराश होकर लौट जाते हैं । तिससे वेव, ऋषि, पितरों का तर्पण किये बिना वस्त्र को न निचोड़े ॥ १३ ॥ रोमों को पौलकर जो मनुष्य तिलों द्वारा पितरों का तर्पण करता है उसने अपने रुधिर और मल से उन सब पितरों को तृप्त किया जातो ॥ १४ ॥ जो द्विज ब्राह्मण स्नान करके टपकते हुए केशों को झाड़ता है और जल के भीतर खड़ा या बैठा आचमन करता है वह मनुष्य पितर और देवताओं से बाह्य (देव कर्म पितृ कर्मके अयोग्य) है ॥ १५ ॥ शिर वा कंठको बांध कर कांछ खोलके वा शिखाको खोलकर, अथवा जनेऊके बिना जो आचमन करता है वह आचमन करके भी अशुद्ध ही रहता है ॥ १६ ॥ स्थल में बैठा मनुष्य जल में और जल में बैठा स्थल में आचमन न करे किन्तु स्थल में बैठा हो तो स्थल में ही आचमन करे और जल में बैठा हो तो जल में ही आचमन करे तो शुद्ध होता है ॥ १७ ॥ आचमन किये पीछे

स्नात्वापीत्वाक्षुतेसुप्ते भुक्त्वारथ्योपसर्पणे ।  
 आचान्तःपुनराचामेद्वासाविपरिधाय च ॥ १८ ॥  
 क्षुतेनिष्ठीवनेचैव दन्तोच्छिष्टेतथाऽनृते ।  
 पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ १९ ॥  
 ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्च सोमःसूर्याऽनिलस्तथा ।  
 तेसर्वेह्यपितिष्ठन्ति कर्णेविप्रस्यदक्षिणे ॥ २० ॥  
 भास्करस्यकरैःपूते दिवास्नानं प्रशस्यते ।  
 अप्रशस्तंनिशिस्नानं राहोरन्यत्रदर्शनात् ॥ २१ ॥  
 मरुतोवसवोरुद्रा आदित्याश्चाथदेवताः ।  
 सर्वेसोमेप्रलीयन्ते तस्मात्स्नानंतुतद्ग्रहे ॥ २२ ॥  
 खलयज्ञेविवाहेच संक्रान्तीग्रहणेतथा ।  
 शर्वर्यादानमस्त्येव नाऽन्यत्रतुविधीयते ॥ २३ ॥  
 पुत्रजन्मनियज्ञेच तथाचात्ययकर्मणि ।  
 राहोश्चदर्शनेदानं प्रशस्तंनान्यदानिनिशि ॥ २४ ॥

यदि स्नान करे, जल पीवे, छौंक आवे, सोवे, खावे, अथवा मार्ग में चले, बल्ल पहेते, ( कपड़ा बदले ) तो फिर से आचमन करे ॥ १८ ॥ छौंकना, थूकना, दातों में उच्छिष्ट ( भूठन ) निकलना, अथवा भूठ बोलना, वा पतितों के संग संभाषण करना, इन के होने पर ब्राह्मण अपने दहिने कान का स्पर्श करे ॥ १९ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सोम, सूर्य, वायु, ये सब देवता ब्राह्मण के दहिने कान में रहते हैं ॥ २० ॥ सूर्य की किरणों से पवित्र हुआ जो दिन में स्नान करना है वह उत्तम है और राहु के द्वारा हुए चन्द्र ग्रहण को छोड़ कर रात्रि का स्नान अधम कहा है ॥ २१ ॥ उज्झांश करत, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, और बारह आदित्य, ये सब देवता चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा में लीन होते ( छिप जाते हैं ) तिससे चन्द्रग्रहण का मोक्ष होने पर स्नान अवश्य करे ॥ २२ ॥ खलियान में होने वाले खलयज्ञ, विवाह, संक्रान्ति, और चन्द्र ग्रहण इनमें रात्रि में भी दान कहा ही है अन्यत्र नहीं ॥ २३ ॥ पुत्रका जन्म होने पर, यज्ञ में मृतक के कर्म में, राहु के दर्शन ( ग्रहण ) में, इन ही अवसरों पर रात्रि में दान करना उत्तम कहा है

महानिशातुविज्ञेया मध्यस्थं प्रहरद्वयम् ।  
 प्रदोषपश्चिमौयामौ दिनवत्स्नानमाचरेत् ॥ २५ ॥  
 चैत्यवृक्षश्रितिस्थश्च चाण्डालः सोमविक्रयी ।  
 एतांस्तु ब्राह्मणः स्पृष्ट्वा सवासाजलमाविशेत् ॥ २६ ॥  
 अस्थिसंचयनात्पूर्वं रुदित्वा स्नानमाचरेत् ।  
 अन्तर्दशाहेविप्रस्य ह्यूर्ध्वमाचमनं स्मृतम् ॥ २७ ॥  
 सर्वगंगासमं तोयं राहुग्रस्ते दिवाकरे ।  
 सोमग्रहेतयैवोक्तं स्नानदानादिकर्मसु ॥ २८ ॥  
 कुशैः पूतं भवेत्स्नानं कुशेनोपस्पृशेद्द्विजः ।  
 कुशेन चोद्धृतं तोयं सोमपानसमं भवेत् ॥ २९ ॥  
 अग्निकार्यात्परिभ्रष्टा संध्योपासनवर्जिताः ।  
 वेदचैवानधीयानाः सर्वे ते वृषलाः स्मृताः ॥ ३० ॥  
 तस्माद्वृषलभीतेन ब्राह्मणेन विशेषतः ।  
 अध्येतव्योऽप्येकदेशो यदि सर्वं न शक्यते ॥ ३१ ॥

अन्यत्र नहीं ॥ २४ ॥ रात्रि के बीच के दो पहरो को महानिशा कहते हैं । इस से  
 सायंकाल तथा प्रातःकाल की रात के दो प्रहरों में दिन के समान स्नान दानादि  
 करे ॥ २५ ॥ चैत्य का वृक्ष जो मरघट पर उगा हो, चिता, चांडाल, यह में सोम लता  
 का बँचने वाला, इन का स्पर्श करके ब्राह्मण संचैल स्नान करे ॥ २६ ॥ अस्थि संच-  
 यन ( मरे के फूल इकट्ठे करने ) से पहिले रोवे तो स्नान करे । ब्राह्मणों को  
 दशदिन के भीतर रोने पर स्नान करना और दशदिन बीते पर आचमन करना कहा  
 है ॥ २७ ॥ जिस समय राहु, सूर्य वा चन्द्रमा को ग्रसे उस समय स्नान दान आदि  
 कर्मों में सब जल गंगा जल के समान कहे हैं ॥ २८ ॥ कुशों से मार्जन पूर्वक स्नान  
 करना पवित्र कारक होता है और कुशों से ही ब्राह्मणादि द्विज आचमन करें क्योंकि  
 कुशों से उठाया जल सोम के पीने तुल्य पवित्र होता है ॥ २९ ॥ जो ब्राह्मण अग्नि-  
 होत्र से भ्रष्ट और संध्योपासन से वर्जित हैं और विधिपूर्वक वेद को भी नहीं पढ़ते वे  
 सब शूद्र के तुल्य कहे हैं ॥ ३० ॥ इस कारण शूद्र हो जाने के भय से विशेष कर  
 ब्राह्मण को चाहिये कि यदि सब वेद को न पढ़ सके-तो वेद का कोई एक भाग ही

शूद्रान्नरसपुष्टस्याप्यधीयानस्य नित्यशः ।

जपतो जुहुतो वापि गतिरुर्ध्वान विद्यते ॥ ३२ ॥

शूद्रान्नं शूद्रसंपर्कः शूद्रेण तु सहासनम् ।

शूद्राज्ज्ञानागमश्चापि ज्वलन्तमपि पातयेत् ॥ ३३ ॥

यः शूद्रया पाचयेन्नित्यं शूद्रीचगृहमेधिनी ।

वर्जितः पितृदेवेभ्यो रौरव्यातिसद्विजः ॥ ३४ ॥

मृतसूतकपुष्टाङ्गं द्विजं शूद्रान्नभोजिनम् ।

अहंतन्नविजानामि कांकांयोनिंगमिष्यति ॥ ३५ ॥

गृध्रोद्वादशजन्मानि दशजन्मानि सूकरः ।

श्वयोनीसप्तजन्मानि इत्येवं मनुरब्रवीत् ॥ ३६ ॥

दक्षिणार्थं तु यो विप्रः शूद्रस्य जुहुयाद्भुविः ।

ब्राह्मणस्तु भवेच्छूद्रः शूद्रस्तु ब्राह्मणो भवेत् ॥ ३७ ॥

मौनव्रतं समाश्रित्य आसीनो न वदेद्द्विजः ।

भुञ्जानो हि वदेद्यस्तु तदन्नं परिवर्जयेत् ॥ ३८ ॥

पढ़े ॥ ३१ ॥ जो ब्राह्मण शूद्र के दिये अन्न को खाके पुष्ट हुआ हो वह प्रतिदिन वेदका अध्ययन, जप, तथा होम करता हुआ भी स्वर्ग को प्राप्त नहीं होता ॥ ३२ ॥ शूद्र का अन्न शूद्र का संपर्क, (मेल) शूद्र के संग एक जगह निवास होना, शूद्र से शिक्षा लेना, ये काम प्रतापी तेजस्वी ब्राह्मण को भी पतित ब्रह्मतेज से हीन कर देते हैं ॥ ३३ ॥ जो द्विज शूद्री स्त्री से भोजन वनवाता हो और जिस के घर में शूद्री ही स्त्री हो वह द्विज पितृ और देवताओं से वर्जित हुआ रौरव नरक को प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥ मरण तथा जन्म के सूतक का अन्न खा २ के जिस का शरीर पुष्ट हुआ हो, और जो शूद्र के अन्न को खाता हो हम नहीं जानते कि वह ब्राह्मण-किस २ योनि में जायगा ॥ ३५ ॥ परन्तु मनुजी ने ऐसा कहा है कि चारह जन्म तक गीध पक्षी, दश जन्म तक सूकर और सात जन्म तक कुत्ते की योनि में जन्म लेता है ॥ ३६ ॥ जो ब्राह्मण दक्षिणा के लिये शूद्र के हविष्य का होम करे वह ब्राह्मण तो जन्मान्तर में शूद्र होता और वह शूद्र ब्राह्मण कुल में जन्मता है ॥ ३७ ॥ मौनव्रत को धारण करके जो ब्राह्मण बैठा हुआ न बोले और वह भोजन करता हुआ बोले उसके अन्न को त्याग देना चाहिये ॥ ३८ ॥

अर्द्धभुक्तेतुयोविप्रस्तस्मिन्पात्रेजलंपिवेत् ।  
 हतदैवंचपित्र्यंच आत्मानंचोपघातयेत् ॥ ३९ ॥  
 भुञ्जानेषुतुविप्रेषु योऽग्रेपात्रंविमुञ्चति ।  
 समूढःसंचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नःसखलूच्यते ॥ ४० ॥  
 भाजनेषुचतिष्ठत्सु स्वस्तिकुर्वन्तिषेद्विजाः ।  
 नदेवास्तृप्तिमायान्ति निराशाःपितरस्तथा ॥ ४१ ॥  
 अस्नात्वावैनभुञ्जीत द्विजश्चाग्निमपूज्यच ।  
 नपर्णपृष्ठेभुञ्जीत रात्रौदीपंविनातथा ॥ ४२ ॥  
 गृहस्थस्तुदयायुक्त्तो धर्ममेवानुचिन्तयेत् ।  
 पोष्यवर्गार्थसिद्धयर्थं न्यायवर्तिसंबुद्धिमान् ॥ ४३ ॥  
 न्यायोपार्जितवित्तेन कर्त्तव्यं ह्यात्मरक्षणम् ।  
 अन्यायेनतुयोजीवेत्सर्वकर्मवहिष्कृतः ॥ ४४ ॥

आधा भोजन किये पीछे जो ब्राह्मण उसी भोजन के पात्र में जल पीवे उसके देवताओं और पितरों का कर्म नष्ट होता और यह अपने को भी नष्ट करता है ॥ ३९ ॥ पांतिमें ब्राह्मणों के भोजन करते हुए जो पहिले पात्र को छोड़ देता है वह मूढ़ बड़ी पापी और ब्रह्महत्यारा कहाता है ॥ ४० ॥ भोजन पात्रों ( पत्तलों ) के उठानेसे पहिले जो ब्राह्मण स्वस्ति ( कल्याण हो ) कहते हैं उस ब्रह्मभोज पर देवता तृप्त नहीं होते और पितर भी निराश हो के लौट जाते हैं ॥ ४१ ॥ विशेष कर ब्राह्मण को साहिये कि-स्नान किये बिना और अग्नि को पूजे बिना भोजन न करे पत्तों की पीठ ( उलटी पत्तल ) पर और रात्रि में दीपक के जलाये बिना अंधरे में भोजन न करे ॥ ४२ ॥ दया युक्त हुआ गृहस्थ पुरुष धर्म की ही चिन्ता करे । अपने पोष्यवर्ग ( पुत्र वा भृत्य आदि ) के निर्वाह की सिद्धि के लिये बुद्धिमान् सदैव न्याय से अन्न घनादि का संवय करे ॥ ४३ ॥ न्याय के साथ धर्मानुकूल संवय किये धन से अपनी रक्षा करे । क्योंकि जो पुरुष अधर्म अन्याय से जीविका करता है वह सब कर्म धर्मों से बाहर ( अनधिकारी ) हो जाता है ॥ ४४ ॥ चयन यह करने वाला, कपिला गौ, सवयक करीबाला,

अग्निचित्कपिलासत्री राजाभिक्षुर्महोदधिः ।  
 दृष्टमात्राः पुनन्त्येते तस्मात्पश्येत्तु नित्यशः ॥ ४५ ॥  
 अरणिंकृष्णमार्जारं चन्दनसुमणिंघृतम् ।  
 तिलान्कृष्णाजिनं छागंगृहेचैतानिरक्षयेत् ॥ ४६ ॥  
 गवांशतंसैकवृषं यत्रतिष्ठत्ययन्त्रितम् ।  
 तत्क्षेत्रंदशगुणितं गोचर्मपरिकीर्तितम् ॥ ४७ ॥  
 ब्रह्महत्यादिभिर्मर्त्यो मनोवाक्कायकर्मभिः ।  
 एतद्गोचर्मदानेन मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥ ४८ ॥  
 कुटुम्बिनेदरिद्राय श्रोतियायविशेषतः ।  
 यद्दानंदीयते तस्मै तद्दानं शुभकारकम् ॥ ४९ ॥  
 वापीकूपतडागाद्यैर्वाजपेयशतैर्मखैः ।  
 गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्तानशुद्ध्यति ॥ ५० ॥  
 आषोडशदिनादवाक् स्नानमेवरजस्वला ।  
 अतज्जर्ध्वं त्रिरात्रं स्यादुशनामुनिरब्रवीत् ॥ ५१ ॥

राजा, भिक्षु, ( संन्यासी ) समुद्र, ये सब दर्शन से ही दर्शन कर्त्ता को पवित्र कर देते हैं । तिससे इन का नित्य दर्शन करे ॥ ४५ ॥ अरणि, काला बिलाव, चन्दन, उत्तम मणि, घी, तिल, काला मृगचर्म, बकरा, इन को घर में रक्खा करे ॥ ४६ ॥ जितनी जगह में सौ गौ और एक बैल बिना बांधे खड़े हों सकें उससे दशगुणी जगह भूमि को गोचर्म कहते हैं ॥ ४७ ॥ इस गोचर्ममात्र भूमिके दान से मनुष्य मन, वाणी, और शरीर से किये ब्रह्महत्या आदि पापों से छूट जाता है ॥ ४८ ॥ जो ब्राह्मणकुटुम्ब वाला हो, दरिद्रहो, और विशेष कर वेदपाठी हो, उसको जो दान दिया जाता है वही दान उस दाता के लिये शुभ करने वाला होता है ॥ ४९ ॥ दी हुई भूमि को हर लेने वाला मनुष्य बावड़ी, कूप, तालाव आदि के धर्मार्थ बनवाने से, सौ १०० वाज-पेय यज्ञोंके करने से, और कोटि गौओंका दान देनेसे भी शुद्ध नहीं हो सकता ॥ ५० ॥ यदि रजोदर्शन से सोलह दिन के बीच कोई स्त्री फिर से रजस्वला हो तो स्नान ही से शुद्ध हो जाती है । सोलहवें दिन के बाद रजोधर्म हो तो तीन दिन में शुद्ध होगी यह उशना मुनि ने कहा है ॥ ५१ ॥ जानकर चाण्डाल के छूनेपरं

युगंयुगद्वयंचैव त्रियुगंचचतुर्युगम् ।  
 चाण्डालसूतिकोदक्या पतितानामधःक्रमात् ॥ ५२ ॥  
 ततःसन्निधिमात्रेण सचैलंस्नानमाचरेत् ।  
 स्नात्वावलोकयेत्सूर्यमज्ञानात्स्पृशतेयदि ॥ ५३ ॥  
 वापीकूपतडागेषु ब्राह्मणेज्ञानदुर्वलः ।  
 तोयंपिबतिवक्त्रेण श्रयोनीजायतेध्रुवम् ॥ ५४ ॥  
 यस्तुक्रुद्धःपुमान्भार्यां प्रतिज्ञाप्याप्यगम्यताम् ।  
 पुनरिच्छतितांगन्तुं विप्रमध्येतुश्रावयेत् ॥ ५५ ॥  
 श्रान्तःक्रुद्धस्तमोऽन्धोवा ह्युत्पिपासाभयादितः ।  
 दानपुण्यमकृत्वावा प्रायश्चित्तंदिनत्रयम् ॥ ५६ ॥  
 उपस्पृशेन्निषवणं महानद्युपसंगमे ।  
 चीर्णान्तेचैवगांदद्याद् ब्राह्मणान्भोजयेद्दश ॥ ५७ ॥  
 दुराचारस्यविप्रस्य निषिद्धाचरणस्यचः  
 अन्नंभुक्त्वाद्विजःकुर्याद्दिनमेकमभोजनम् ॥ ५८ ॥

दो दिन में, सूतिका स्त्री के छूने पर चार दिनमें, रजस्वला के छूने पर छः दिन में, और पतित स्त्री के छूने पर आठ दिनमें शुद्ध होता है ॥ ५२ ॥ चाण्डालादि के समीप बैठे तो सचैल स्नान करे । यदि अज्ञान से चाण्डालादि को छू लेवे तो स्नान करके सूर्य नारायण का दर्शन करे ॥ ५३ ॥ हाथों के विद्यमान रहते भी जो अज्ञानी ब्राह्मण वावड़ी कुशा वा तालाब में मुख लगाकर जल पीता है वह निश्चय करके जन्मान्तर में कुत्ता होता है ॥ ५४ ॥ जो मनुष्य क्रुद्ध होके अपनी स्त्री से प्रतिज्ञा करे कि तू दूषित होने से गमन करने योग्य नहीं है और फिर उस स्त्री का संग करना चाहे तो इस बात को ब्राह्मणों की मण्डली वा समा में सुना देवे ॥ ५५ ॥ जो थका हो, क्रोध करे, मादकद्रव्य खाने आदि से उन्मत्त, बेहोश मूर्छित हुआ हो, सुआ, प्यास वा भय से पीड़ित हो गया हो, यथा समय दान पुण्य न करे तो वह ब्राह्मण तीन दिन प्रायश्चित्त करे ॥ ५६ ॥ और गंगा आदि बड़ी नदियों के संगम में सायं, प्रातः, और मध्याह्न में तीन बार स्नान और आचमन करे । प्रायश्चित्त किये पीछे एक गोदान करे और दश ब्राह्मण जिमावे ॥ ५७ ॥ दुराचारी और निषिद्ध आचरण करने वाले ब्राह्मण का अन्न खा कर द्विज पुरुष एक दिन भोजन न करे ॥ ५८ ॥ उत्तम सदा-

सदाचारस्यविप्रस्य तथावेदान्तवेदिनः ।  
 भुक्त्वान्नंमुच्यतेपापा-दहोरात्रंतुवैनरः ॥ ५९ ॥  
 ऊर्ध्वोच्छिष्टमधोच्छिष्टमन्तरिक्षमृतीतथा ।  
 कृच्छ्रत्रयंप्रकुर्वीत अशौचमरणेतथा ॥ ६० ॥  
 कृच्छ्रेदैव्ययुतंचैव प्राणायामशतद्वयम् ।  
 पुण्यतीर्थैर्ह्यार्द्रशिराः स्नानंद्वादशसंख्यया ।  
 द्वियोजनंतीर्थयात्रा कृच्छ्रमेकंप्रकल्पितम् ॥ ६१ ॥  
 गृहस्थःकामतःकुर्याद्व्रतसःसेचनंभुवि ।  
 सहस्रंतुजपेद्वेद्याः प्राणायामैस्त्रिभिःसह ॥ ६२ ॥  
 चातुर्वेद्योपपन्नस्तु विधिवद्ब्रह्मघातके ।  
 समुद्रसेतुगमनं प्रायश्चित्तंसमादिशेत् ॥ ६३ ॥  
 सेतुबन्धपथेभिक्षां चातुर्वर्ण्यात्समाचरेत् ।  
 वर्जयित्वाविकर्मस्थान् छत्रोपानद्विवर्जितः ॥ ६४ ॥

चारी और वेदान्त को जानने वाले ब्राह्मणका अन्न खाकर मनुष्य एक दिन रात में अनेक पापों से छूट जाता है ॥ ५९ ॥ नामि से ऊपर उच्छिष्ट होने वा नामि से नीचे के भाग में अशुद्ध होने की दशा में कोई मरे, वा बढिया पर मरे, अथवा जो सूतक में मरे, उस के लिये पुत्रादि दायी लोग शुद्धि के बाद तीन कृच्छ्र व्रत करें ॥ ६० ॥ दश हजार गायत्री का जप, दोसौ २०० प्राणायाम, और पवित्र तीर्थ में बारह बार शिर भिगो २ कर स्नान करे ये सब एक कृच्छ्र का फल देते हैं । इस कारण कृच्छ्र व्रत करने में असमर्थ हो तो उक्त गायत्री जपादि को तिगुणा करे । और दो योजन तक तीर्थयात्रा को भी एक कृच्छ्र माना है ॥ ६१ ॥ यदि गृहस्थ पुरुष जानकर अपने धीर्य को भूमि पर गिरावे तो वह तीन प्राणायाम के साथ एक हजार गायत्री का जप करे ॥ ६२ ॥ विधिपूर्वक जिसने चारों वेद पढ़े जाने हों वह यदि ब्रह्महत्या करे तो सेतुबन्ध रामेश्वर पर जाना प्रायश्चित्त बतावे ॥ ६३ ॥ और वह प्रायश्चित्ती जूता और छाता का धारण न करके सेतुबन्ध के मार्ग में हिंसा चोरी न्यभिचारादि दुष्कर्मियों को छोड़ के शेष चारों वर्णों से भिक्षा मागता खाता जावे ॥ ६४ ॥ वह भिक्षा मांगते

अहंदुष्कृतकर्मवै महापातककारकः ।  
 गृहद्वारेषु तिष्ठामि भिक्षार्थी ब्रह्मघातकः ॥ ६५ ॥  
 गोकुलेषु वसेच्चैव ग्रामेषु नगरेषु च ।  
 तपो वनेषु तीर्थेषु नदीप्रसवनेषु च ॥ ६६ ॥  
 एतेषु खंयापयन्नेनः पुण्यं गत्वा तु सागरम् ।  
 दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम् ॥ ६७ ॥  
 रामचन्द्रसमादिष्टं नलसंचयसंचितम् ।  
 सेतुं दृष्ट्वा समुद्रस्य ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।  
 सेतुं दृष्ट्वा विशुद्धात्मा त्ववगाहेत सागरम् ॥ ६८ ॥  
 यजेत वाश्रमे धेनो राजा तु पृथिवीपतिः ।  
 पुनः प्रत्यागतो वैश्रम वासार्थमुपसंपति ॥ ६९ ॥  
 स पुत्रः सहभृत्यश्च कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।  
 गाश्चैवैकशतं दद्याच्च आतुर्विद्ये पुदक्षिणाम् ॥ ७० ॥

समय, ऐसे, कहा करे कि, "मैं, खोंटा कर्म करने वाला और महापातक करने वाला हूँ । मुझे ब्रह्महत्या लगी है भिक्षा के लिये आपके द्वारे पर खड़ा हूँ" ॥ ६५ ॥ ग्राम वा नगरों की गोशालां धर्मशालादि में रात को बसे । तपो वनों में, तीर्थों के नदी के सोताओं पर ॥ ६६ ॥ इन सब स्थानों में अपने पाप को प्रकट करना हुआ दश योजन चौड़े और सौ योजन लम्बे पवित्र समुद्र पर जाके ॥ ६७ ॥ महाराजा भगवान् रामचन्द्र जी की आज्ञा से नलवानर के बनाये हुए समुद्र के सेतु को देखकर ब्रह्महत्या को दूर करता है । सेतुके दर्शन करके विशुद्ध मन हुआ सागरमें स्नान करै ॥ ६८ ॥ और पृथ्वी का पति राजा ब्रह्महत्या करै तो अश्वमेध यज्ञ करै । फिर तीर्थ यात्री लौट कर घर में वसने के लिये आवे ॥ ६९ ॥ तब पुत्र और भृत्यों सहित ब्राह्मणों को ज़िमावे और चारों वेदों को पढ़ने जानने वाले ब्राह्मणों को सौ १०० गौ दक्षिणा में देवे ॥ ७० ॥ तब ब्राह्मणों को प्रसन्न सन्तुष्ट करने से ब्रह्महत्या से छूट जाता है ।

ब्राह्मणानां प्रसादेन ब्रह्महातुविमुच्यते ।

विन्ध्यादुत्तरतोयस्य संवासः परिकीर्तितः ॥ ७१ ॥

पराशरमतंतस्य सेतुबन्धस्यदर्शनात् ।

सवनस्थास्त्रियंहत्वा ब्रह्महत्याव्रतंचरेत् ॥ ७२ ॥

सुरापश्चद्विजः कुर्यान्नदीं गत्वासमुद्रगाम् ।

चान्द्रायणे ततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ७३ ॥

अनहुत्सहितांगांच दद्याद्विप्रेषु दक्षिणाम् ॥ ७४ ॥

सुरापानं सकृत्कृत्वा अग्निवर्णां सुरां पिबेत् ।

स पावयेदिहात्मानमिहलोकैः परत्र च ॥ ७५ ॥

अपहत्य सुवर्णं तु ब्राह्मणस्य ततः स्वयम् ।

गच्छेन्मुशलमादाय राजानं स्ववधाय तु ॥ ७६ ॥

हतः शुद्धिमवाप्नोति राज्ञाऽसौ मुक्त एव च ।

कामतस्तु कृतं यत्स्यान्नान्यथा वधमर्हति ॥ ७७ ॥

विन्ध्याचल पर्वतसे उत्तर जो बसता है ॥ ७१ ॥ उस के लिये पाराशर ऋषि ने सेतु-  
बन्धु का दर्शन कहा है । जिस के शीघ्र संस्तान होने वाला हो ऐसी स्त्री को मार  
डाले तो ब्रह्महत्या का व्रत करे ॥ ७२ ॥ मदिरा पीने वाला ब्राह्मण संमुद्र तक जाने  
वाली नदी पर जाके चान्द्रायण व्रत करे फिर व्रत के पूरे होने पर ब्राह्मणों को भोजन  
करावे ॥ ७३ ॥ एक बैल सहित एक गौ ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ७४ ॥ अथवा जो  
शुद्ध ब्राह्मण एक बार भी मदिरा को पीवे वह अग्नि वर्ण (अत्यन्त उष्ण) मदिरा  
पीकर प्राण त्याग करे तो इस लोक और परलोक में अपने को पवित्र कर लेता है  
॥ ७५ ॥ ब्राह्मण के सुवर्ण को छुराकर आप ही मूसल को हाथ में लेके अपने वध  
के लिये राजा के समीप जाय ॥ ७६ ॥ तब यदि राजा मरवा, डाले वा उचित समझ  
के छोड़ देवे तो भी दोनों हालत में पाप से छूट जाता है । यदि जान कर बोरो की  
हो तो मारने के योग्य है अन्यथा वध करने योग्य नहीं है ॥ ७७ ॥ एक जगह बैठने,  
लेटने, एक सवारी में बैठ कर चलने, पास २-बैठ कर बातलाप करने और साथ २

आसनाच्छयनाद्यानात्संभाषात्सहभोजनान् ।

संक्रामन्तीहपापानि तैलविन्दुरिवाम्भसि ॥ ७८ ॥

चान्द्रायणयावकंच तुलापुरुषएवच ।

गवांचैवानुगमनं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ७९ ॥

एतत्पाराशरंशास्त्रं श्लोकानांशतपञ्चकम् ।

द्विनवत्यासमायुक्तं धर्मशास्त्रस्यसंग्रहः ॥ ८० ॥

यथाध्ययनकर्माणि धर्मशास्त्रमिदंतथा ।

अध्येतव्यंप्रयत्नेन नियतंस्वर्गकामिना ॥ ८१ ॥

इति श्रीपाराशरीये धर्मशास्त्रे सकलप्रायश्चित्त

निर्णयो नाम द्वादशोऽध्यायः समाप्तः

समाप्ता च पाराशरसंहिता ॥

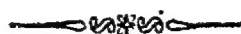
बैठ कर भोजन करने से पापियों के पाप अच्छे लोगों को लगते हैं कि जैसे जल में तेल का बिन्दु फैलजाता है ॥ ७८ ॥ चान्द्रायण, यावक ( जी को ही खाना, ) और तुला पुरुष-तुलादान करना, गौओं के पीछे गमन करना, अर्थात् तन मन धन से गोरक्षा में तत्पर होना ये काम सब पापों को नाश करने वाले हैं ॥ ७९ ॥ यह पाराशर ऋषिका कहा धर्म शास्त्र जिसमें पांचसी वानवे ५६२ श्लोक हैं । सो यह धर्म शास्त्र का संक्षेप से संग्रह किया है ॥ ८० ॥ जैसे वेदके अध्ययन सम्बन्धी कर्म पुण्योत्पादक हैं वैसा ही यह धर्मशास्त्र है इस लिये स्वर्ग की इच्छा रखने वाले पुरुष को यह धर्म शास्त्र यत्न से पढ़ना चाहिये ॥ ८१ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्रके ग्राहणसर्वस्व सम्पादक पं भीमसेन शर्माकृत भाषानुवाद में समस्त प्रायश्चित्त निर्णय नामक चारहवां १२ अध्याय पूरा हुआ ॥

॥ समाप्त ॥



# पुस्तकों का सूचीपत्र ।



ब्राह्मणसर्वस्व मासिकपत्र पिछले भाग, ( तीसरे भाग से १२ वें भाग तक के सेट मौजूद हैं ) प्रति भाग का १॥) एक साथ सब भाग लेने पर १०) अष्टादश स्मृति हिन्दी भाषा टीका सहित ३) भगवद्गीता भा० टी० २॥) याज्ञवल्क्यस्मृति सटीक १) अष्टाध्यायीपाणिनीय सटीक सोदाहरण २) ईशोपनिषद् सभाष्य ३) केनोपनिषद् सभाष्य ३) प्रश्नोपनिषद् सभाष्य ॥) उपनिषदों का उपदेश ( प्रथम खण्ड ) १।) द्वितीय खण्ड १) सतीधर्म संग्रह १।) पतिव्रता माहात्म्य ३॥) भर्तृहरि नीतिशतक भा० टी० ३) भर्तृहरि वैराग्यशतक ३) भर्तृहरि शृङ्गारशतक ३) दर्श-पौर्णमासपद्धति १) इष्टिसंग्रह ॥) मानवगृहसूत्र ॥) आपस्तम्बगृहसूत्र १) यज्ञ-परिभाषासूत्रसंग्रह ॥) पञ्चमहायज्ञविधि ३) भोजन विधि ॥) सन्ध्योपासनविधि ॥) कातीयतर्पणप्रयोग ॥) नित्यहवनविधि ॥) वेदसार शिवस्तोत्र ॥) दयानन्दमत-विद्रावण १) आर्यमतनिराकरणप्रश्नावली १) आश्वमेधिकमन्त्रमीमांसा ३) सत्यार्थ प्रकाशसमीक्षा ३) पञ्चकन्याचरित्र ३) विधवाविवाहमीमांसा १३) मूर्त्तिपूजा-मण्डन ३) ठनठनवावू ३) दयानन्द की विद्वता ॥) नमस्ते मीमांसा ॥) सनातन-धर्मप्रश्नोत्तरावली ॥) प्रेमरत्न ३) गोरत्न ३) भजन विनोद ॥) रम्भाशुकसम्बाद सचित्र ३) पुराणकर्तृमीमांसा ॥) जैनास्तिकत्वविचार ॥) दुनियाँ की रीति ॥) गीतासंग्रह १३) योगसार १) कर्त्तामण्डन ॥) विध्वंसोद्वाहनपेथ ॥) सुमनवाटि-का ३) रामगीता ३) रामहृदय ३) आदर्शरमणी ३) छन्दोवद्ध अंगरेजी हिन्दी वल्लभ कोष ॥) अंगरेजी हिन्दी व्यापारिक कोष १॥) हनुमानचालीसा ॥) राम चालीसा ॥) उपदेशरत्नमाला ॥) धर्मरक्षा और भारत विनय ॥) साङ्गीत गोरक्षा ॥) भजनरत्नावली ३) त्रैभाषिक व्याकरण शब्दावली १) शिवाजी और मराठाजाति ३) गुरुगोविन्दसिंह १३) अभिमन्युवध ३) यूनान की कहानियाँ ३) आर्यकृषिवि-ज्ञान १) भारतीय आख्यान १) हिन्दुओं का सामाजिक आदर्श ३) मूर्त्तिपूजा ( पं० अम्बिकादत्त व्यासकृत ) ॥) अवतारमीमांसा १) अक्षरविज्ञान १) अपूर्व-नौका ३) कविता विनोद ३) रामायण रहस्य १३) उपदेश मञ्जरी १३) स्त्री जाति का महत्त्व ३)

मिलने का पता:—

मैनेजर ब्रह्मप्रेस—इटावा ।

